* ॐ *

पञ्चकोश और सूक्ष्म जगत्

अर्थात्

उपनिषदों के अनुसार पांच कोश, सात लोक, तीन शरीर, तीन अवस्था, आत्मा के चार पाद और सांख्य के २४ तत्त्वों की व्याख्या, उन पर तुलनात्मक विचार, और मोक्ष के साधनों का वर्णन।

लेखक—

श्री प० गङ्गाप्रसादजी एम० ए०

चीफ़ जज, टिहरी गढ़वाल राज्य।

(उस अंग्रेजी निबन्ध का छायानुवाद जो लेखक ने श्री दयानन्द 'निर्वाण अर्द्ध' शताब्दी सं० १९९० के लिए लिखा था।)

श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त-प्रान्त
की ओर से प्रकाशित।

प्रथम संस्करण
१००० प्रति

मूल्य अजिल्द का =)
,, सजिल्द का ......

* ॐ *

विषय-सूची

अंश १—प्रारंभिक

अंश २—पंचकोश

अंश ३—पंचकोश और सांख्य दर्शन

विषय पृष्ठ संख्या

अंश ४—पंचकोश और थियोसफी

अंश ५—पंचकोश और शरीरत्रय

अंश ६—पंचकोश शरीरत्रय और वेदान्त

अंश ७—पंचकोश और अष्टांगयोग

——:——

* ॐ *

* भूमिका *

दयानन्द निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के अवसर पर श्री आचार्य रामदेवजी के प्रस्तावानुसार कुछ ऐसे विशेष व्याख्यानों की योजना की गई थी जो अंग्रेजी में लिख कर पढ़े जाँय और पीछे पुस्तकाकार छप जाँय जिससे आर्यसमाज के अंग्रेजी साहित्य में कुछ वृद्धि हो। तदनुकूल इस विषय पर मैंने अंग्रेजी में निबन्ध लिखा था। परन्तु अजमेर में कुछ सज्जनों ने यह परामर्श दिया कि व्याख्यान आर्यभाषा में दिया जाय जिससे अंग्रेजी न जानने वाले भी उसको समझ सकें। इसलिए निर्वाण अर्द्ध शताब्दी पर मैंने व्याख्यान आर्य भाषा ही में दिया यद्यपि निबन्ध अंग्रेजी में लिखा हुआ था जो छपने के लिए भेजा जा चुका है। कुछ मित्रों के अनुरोध से मैंने अपने व्याख्यान को आर्यभाषा में भी लिख दिया जो अब पाठकों की भेंट किया जाता है। यह अंग्रेजी निबन्ध का प्रत्यक्षर अनुवाद नहीं, परन्तु उसी के आधार पर है। अंश ६ और ७ अंग्रेजी निबन्ध में नहीं थे, इसमें बढ़ाए गए हैं।

पुस्तक का विषय आध्यात्मिक होने से गूढ़ और कुछ कठिन है। उसके वास्तविक तत्त्व और तथ्य को योगी लोग अनुभव द्वारा ही जान सकते हैं। मैंने अपनी तुच्छ मति के अनुसार केवल उपनिषदों के आशय को प्रकट करने का यत्न किया है। इस विषय पर लिखना इस लिए उचित समझा कि आर्यसमाज में ऐसे विषयों पर साहित्य कम है। यदि इस पुस्तक को पढ़ कर आर्यजनता अथवा सर्व साधारण में आध्यात्मिक विषयों की ओर कुछ रुचि बढ़े तो मैं अपना प्रयत्न सफल समझूँगा ॥

टिहरी
१४-२-३४

गङ्गाप्रसाद

* ॐ *

अंश १

प्रारम्भिक

१ सृष्टि की समस्या

ऋग्वेद का एक मंत्र इस प्रकार है:—

"को अद्धा वेद क इह प्रवोचत कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आ बभूवः ॥"

(ऋ० अ० ८ व० १७ मं० ६)

अर्थ—यहाँ कौन जानता है, कौन कह सकता है कि यह विविध प्रकार की सृष्टि कहां से आई ? देव भी इसकी रचना के पीछे से हैं। तो कौन जानता है कि यह सृष्टि कैसे हुई ?

जो प्रश्न इस मन्त्र में ऐसी स्पष्टता से किया गया है, वह किसी न किसी रूप में प्रत्येक मनुष्य के मन में-चाहे वह मूर्ख हो वा पंडित हो-उठता रहता है, और हर एक धर्म को इसका उत्तर देना आवश्यक है। यहूदी, ईसाई, और मोहम्मदी मत इसका उत्तर यह देते हैं, कि यह सृष्टि केवल ईश्वर की आज्ञा से अभाव से भाव में आई; और जब प्रलय का समय आवेगा, तो फिर सदा

के लिए अभाव में लीन होजायगी। इस सृष्टि से पहले कोई सृष्टि न थी और न इसके पीछे फिर कोई होगी।

२ अभाव से भाव

अभाव से किसी वस्तु की उत्पत्ति विज्ञान Science और युक्ति के विरुद्ध है। विज्ञान से जाना जाता है, कि जो वस्तु अब है, वह पहले भी किसी न किसी रूप में अवश्य थी। एक छोटे से बीज से बड़ा वृक्ष हो जाता है, परन्तु उस वृक्ष में जितने परमाणु हैं, वे सब पहले वायु, जल और पृथ्वी के रूप में वर्त्तमान थे। उस वृक्ष की लकड़ी को जला दिया जावे, तो थोड़ी सी भस्म रह जाती है, परन्तु उसके शेष परमाणु धूम रूप से वायु में मिल जाते हैं। उनका अभाव नहीं होता। हमारे शास्त्रों का यही सिद्धान्त है। सांख्य दर्शन में कहा है—

"नाऽवस्तुनो वस्तु सिद्धिः" (सांख्य सूत्र ७८)

अर्थ—जो पदार्थ नहीं हैं उससे कोई पदार्थ नहीं बन सकता।

गीता में यह सिद्धान्त और भी स्पष्ट शब्दों में बतलाया गया है—

"नासतो विद्यते भावो नाऽभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोन्तस्त्वनयोस्तत्वदर्शिभिः॥"

(गीता अ० २ श्लोक १६)

अर्थ—जो पदार्थ नहीं है, उसका भाव नहीं हो सकता, और

जो है, उसका अभाव नहीं हो सकता। तत्त्व दर्शियों ने इन दोनों के सार को समझा है।

३ सृष्टि का विकास

प्राकृत विज्ञान Physical Science से यह बात सिद्ध हुई है, कि इस सृष्टि का विकास परमाणुओं से हुआ है, और इसकी रचना में बहुत समय लगा है। विज्ञान वेत्ताओं Scientists के अनुसार आकाश में जो असंख्य तारागण रात्रि समय दिखलाई देते हैं, वे (थोड़े से ग्रहों Planets को छोड़कर) सब बड़े-बड़े सूर्य हैं, जिनमें से बहुत से हमारे सूर्य से भी बहुत बड़े हैं। जिस प्रकार यह पृथ्वी और मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर आदि ग्रह हमारे सूर्य के अधीन होकर उसकी परिक्रमा करते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के समान अनेक लोक लोकान्तर घूमते हैं, जो बहुत दूरी के कारण हमको यहाँ से दिखलाई नहीं देते। हर एक सूर्य को उन ग्रहों सहित, जो उसकी परिक्रमा करते हैं "सूर्य मंडल" Solar System कहते हैं। आकाश में हमारे सूर्य मंडल जैसे और उससे भी बड़े अनगिनत सूर्य मंडल हैं।

विज्ञान Science के अनुसार प्रत्येक सूर्य मंडल आरम्भ में एक वायु का गोला Nebula था, जिसका केन्द्र वह सूर्य, और परिधि वहाँ तक थी, जहाँ तक उसका दूर से दूर ग्रह है। यह गोला अपनी धुरी पर घूमता था। सहस्रों वा लक्षों वर्ष पीछे, घूमने से उसके परमाणु पास पास आए, तो उनके संघर्ष से वह

गोला अग्निरूप होगया, जैसा कि अब केवल सूर्य है। कुछ समय पीछे सृष्टि-नियमों के अनुसार इस गोले के बाहरी भाग अलग होकर छोटे-छोटे गोले बन गए, और वह केन्द्रीय सूर्य की उसी धुरी पर परिक्रमा करते रहे। इस प्रकार ग्रहों की रचना हुई। ये ग्रह केन्द्रीय भाग की अपेक्षा बहुत छोटे होने के कारण ठंडे होते गए, परन्तु पृथ्वी के समान ठोस Solid होने से पहले, ये बहुत समय तक जलरूप liquid state में रहे। अर्थात उनमें सोना, चांदी, लोहा, पत्थर आदि जो पदार्थ हैं, वे यद्यपि इतने ऊष्ण नहीं रहे थे कि उनमें अग्नि के समान चमक हो, तो भी वे तरल अवस्था state of fusion में थे। पृथिवी के गर्भ में अब भी अग्नि रूप वा द्रव रूप पदार्थ हैं, जो ज्वालामुखी पर्वतों से निकलते हैं, और उन्हीं के कारण भूकम्प होते हैं। ज्यों ज्यों ग्रहों की गर्मी निकलती गई, वे अन्त में पृथ्वी रूप solid होगए। उसके पीछे उनमें औषधि, अन्न, वनस्पति, और फिर मत्स्य, कच्छप, कीट, पशु आदि जीव पैदा हुए। पीछे मनुष्य पैदा हुए।

४ प्राचीन ग्रन्थों में सृष्टि विकास

ऊपर लिखे सिद्धान्त को योरोप में लगभग १०० वर्ष हुए सब से पहले Laplace लापलेस नामक विद्वान् ने सिखाया, परन्तु हमारे प्राचीन से प्राचीन शास्त्रों में यह सिद्धान्त पहले से ही पाया जाता है। तैत्तिरीय उपनिषद् की ब्रह्मानन्द वल्ली में उसका संक्षिप्त रूप से इस प्रकार वर्णन है:—

"तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः, आकाशाद् वायुः,

वायोरग्निः, अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथिवी, पृथिव्या ओषधयः, ओषधिभ्योऽन्नम्, अन्नाद्रेतः, रेतसः पुरुषः।" तैत्तिरीय २।१

अर्थ—उस परमात्मा से पहले आकाश उत्पन्न हुआ, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से ओषधियां (अर्थात् जड़ी बूटी आदि), ओषधि से अन्न (वनस्पति आदि), अन्न से जीव, और जीव के पीछे मनुष्य हुआ।

५ आकाश से स्थूल पदार्थों की उत्पत्ति

कुछ लोग आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी को पंच तत्व कहते हैं, परन्तु वास्तव में उनका ठीक नाम पंच महाभूत है। अर्थात् वे पांच मुख्य अवस्थाएं प्राकृत पदार्थों की हैं, जो दृश्य जगत् में पाई जाती हैं। अंग्रेजी विज्ञान Physical science में प्राकृत पदार्थों की तीन अवस्थायें बतलाई गई हैं, अर्थात् १ वायव्य Gaseous, २ तरल वा द्रव Liquid और ३ दृढ़ वा ठोस Solid। पंच भूत रूपी विभाग उसी प्रकार का है, परन्तु उससे अधिक पूर्ण है। आग्नेय Igneous अवस्था वायव्य और जल (अथवा तरल) के बीच की अवस्था है। इन चार अवस्थाओं का वर्णन ऊपर लिखे सृष्टि-विकास के वर्णन में आ चुका है। पांचवी अवस्था अर्थात् आकाश Ether शेष चारों अवस्थाओं से सूक्ष्मतर और वायव्य से पहले की अवस्था है। इसका ज्ञान पश्चिमीय विद्वानों को थोड़े ही समय से हुआ। अब विज्ञानवादी इस बात को मानने लगे हैं, कि अन्य सब प्राकृत पदार्थ आकाश

Ether से उत्पन्न हुए। परमाणुओं के विषय में अब अधिकतर यह माना जाता है, कि वे Electrons इलैक्ट्रौन से बने हैं। इलैक्ट्रान के सम्बन्ध में इंगलिस्तान के सुप्रसिद्ध विज्ञान के आचार्य Sir Oliver Lodge सर औलिवर लौज अपने पुस्तक 'प्राण और प्रकृति' Life and Matter में इस प्रकार लिखते हैं:—

The only surmise which at present holds the field is that they are knots, or twists, or vortices, or some sort of either static or kinetic modifications of the ether of space. (Page 15)

अर्थ—अब तक जो विचार अधिक माना जाता है, वह यह है कि ये (अर्थात् परमाणु) आकाश वा ईथर Ether की ग्रंथियों वा उसके स्थिर वा जंगम किसी प्रकार के परिवर्त्तन रूप हैं।

अंश २

पंच कोश

१ प्रकृति के सूक्ष्म रूप

जैसा ऊपर कहा गया, पश्चिमी पदार्थ विज्ञान में केवल भौतिक जगत् का वर्णन है, और उसको आकाश Ether से अधिक सूक्ष्म प्राकृत पदार्थों से कोई जानकारी नहीं। परन्तु हमारे शास्त्रों में प्रकृति के कई सूक्ष्मतर रूपों का वर्णन है। मनुष्य का स्थूल शरीर,जो पंच भूतों से बना है "अन्नमय" वा 'अन्नरस मय' कोश कहलाता है। तैतिरीयोपनिषद् के उस अनुवाक् में जिसका एक भाग ऊपर दिया गया, कहा गया है—

"स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः तस्येदमेव शिरोऽयं दक्षिणः पक्षः, अयमुत्तर पक्षः, अयमात्मा, इदं पुच्छं प्रतिष्ठा।"

अर्थ—ये शरीर अन्नरसमय है, यह शिर ही इसका शिर है, यह दाहना बाहु इसका दक्षिण पक्ष है, यह बांया बाहु उत्तर पक्ष है, यह धड़ इसका मध्यम भाग है, यह टांगें इसका पिछला भाग और सहारा है।"

२ पंच कोश और लोक

तैत्तिरीयोपनिषद् में अन्नमय कोश के अतिरिक्त चार और कोशों का वर्णन है, जिनमें से हर एक पहिले की अपेक्षा उच्चतर

और सूक्ष्मतर है--अर्थात् प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञान-मय कोश और आनन्दमय कोश। इनकी व्याख्या आरम्भ करने से पहिले यह लिखना आवश्यक है, कि जैसे मनुष्य के शरीर में ये कोश हैं, उसी प्रकार जगत् में लोक हैं। एक प्रसिद्ध कहावत है, कि "यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे" अर्थात् जैसी रचना मनुष्य के शरीर में है वैसे ही सारे विश्व वा ब्रह्माण्ड में है। वास्तव में मनुष्य का देह एक छोटा सा संसार है। वेद और उपनिषदों में मनुष्य और जगत् की इस समानता का बहुत वार वर्णन आया है। दृष्टान्त के लिए ऐतरेय उपनिषद् देखिए।

९ वेद में कोश और लोक

अथर्ववेद के प्रसिद्ध स्कम्भ सूक्त के नीचे लिखे मन्त्र में कोश और लोकों का वर्णन है—

"यत्र लोकांश्च कोशांश्चापो ब्रह्म जना विदुः।
असच्च यत्र सच्चान्तः स्कंभंतं ब्रूहि कतमः स्विदेवस॥"

(अथर्व वेद का० १० सू० मं० १०)

अर्थ—जिस सर्वाधार ब्रह्म में स्थित विविध लोक और कोश, फैले हुए परमाणु, अव्यक्त प्रकृति और व्यक्त प्रकृति को विद्वान् जन जानते हैं, उस ब्रह्म का उपदेश कीजिए, वह कौन सा देव है?

लोक सात हैं, अर्थात् भूः, भुवः, स्वः, जनः, तपः, महः और सत्यम्। इनमें से पहले चार का सम्बन्ध पहले चार कोशों से है, और शेष तीन आनन्दमय कोश के अन्तर्गत हैं। भूर्लोक इसी दृश्य वा स्थूल जगत् का नाम है।

४ प्राणमय कोश

अब हम दूसरे कोश की व्याख्या करते हैं। तैत्तिरीयोपनिषद् ब्रह्मानन्द वल्ली के दूसरे अनुवाक् में लिखा है—

"तस्माद् वा एतस्मादन्नरसमयात् अन्योऽन्तर आत्मा प्राणमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुष विधएव। तस्य पुरुष विधताम्। अन्वयं पुरुष विधः। तस्य प्राण एव शिरः। व्यानो दक्षिण पक्षः। अपानमुत्तरः पक्षः। आकाश आत्मा। पृथवी पुच्छं प्रतिष्ठाः"

अर्थ—इस अन्नरसमय कोश से भिन्न और इसके भीतर प्राणमय कोश है, उससे यह अन्नमय कोश भरा हुआ है, वह यह कोश मनुष्याकार है। उसकी मनुष्याकारता इसी के समान है। *प्राण उसका शिर है, *व्यान उसका दक्षिण अंग है, *अपान उत्तर अंग है, *समान उसका धड़ वा मध्य भाग है, *उदान उसका पिछला भाग और सहारा है।

---

*ये पाँच प्रकार के प्राण, वा प्राण वायु के पांच भागों के नाम हैं, अर्थात्—

(१) प्राण वायु—जिससे श्वास बाहर को जाता है।

(२) अपान वायु—जिससे श्वास भीतर आता है।

(३) समान वायु—जो नाभिचक्र में स्थित है, और रस एवं रुधिर को शरीर के सब भागों में पहुँचाता है।

(४) उदान वायु—जो अन्न को कण्ठ के नीचे उदर में धकेलता है

(५) व्यान वायु—जो सारे शरीर में व्याप्त है और जिससे शरीर के अन्य सारे काम होते हैं।

५ प्राणमय लोक

जैसा सम्बन्ध "अन्नमय कोश" अर्थात् स्थूल शरीर का इस स्थूल जगत् से है, वैसा ही सम्बन्ध "प्राणमय कोश" का प्राणमय लोक से है। वह लोक "भुवर्लोक" कहलाता है, जैसे यह लोक "भूर्लोक" कहलाता है। यह समझना भूल है, कि प्राण केवल मनुष्य और जीवों के शरीर में है। प्राण आकाश की तरह सब जगह भरा हुआ है, परन्तु वह आकाश से अधिक सूक्ष्म है; जैसे आकाश वायु से और वायु जल से अधिक सूक्ष्म है। हम सब प्राण के समुद्र में इस प्रकार रहते हैं, जैसे मछलियाँ जल के समुद्र में रहती हैं। प्राणमय कोश उसी प्रकार प्राण का बना हुआ है, जैसे अन्नमय कोश पंच भूतों का बना हुआ है, जिनसे स्थूल जगत् भी बना है। यह बात, कि प्राण एक पदार्थ है "प्राणमय" शब्द से ही स्पष्ट है, जिसका अर्थ है 'प्राण से बना हुआ'। जैसे स्वर्णमय का अर्थ है 'सोने से बना हुआ' और काष्ठमय का अर्थ है 'लकड़ी से बना हुआ'। अथर्ववेद के नीचे लिखे हुए मन्त्र से बादलों में, बिजली और वर्षा में प्राण का होना स्पष्ट है:—

"नमस्ते प्राण क्रन्दाय नमस्ते स्तनयित्नवे।
नमस्ते प्राण विद्युते नमस्ते प्राण वर्षते॥"

(अथर्व वेद ११।४॥)

उसी सूक्त के एक दूसरे मन्त्र में प्राणमय तनु वा शरीर का नाम आया है।

"याते प्राण प्रिया तनू र्याते प्राण प्रेयसी ।
अथो यद् भेषजं तव तस्य नो धेहि जीवसे ॥"
(अथर्व वेद ११।४।६३)

६ प्राण और आधुनिक विज्ञान वेत्ता

आधुनिक वैज्ञानिकों में कुछ बड़े विद्वान् प्राण को एक तत्त्व मानने की आवश्यकता को समझने लगे हैं—Sir Oliver Lodge सर औलिवर लाज अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "प्राण और प्रकृति" Life and matter में लिखते हैं.—

The possibility that life may be a real and basal form of existence and there fore persistent is a possibility to be borne in mind. The idea may at least serve as a clue to investigation, and some day bear fruit. (Life and Matter, p. 53).

अर्थ—इस बात को ध्यान में रखना चाहिए, कि यह सम्भव है कि प्राण एक वास्तविक पदार्थ और एक तत्त्व है, इसलिए अमर अर्थात् सदा रहने वाला है । कम से कम यह विचार आगे की खोज के लिए सहायक हो सकता है, और किसी दिन सफल हो सकता है ।

खनिज पदार्थों में केवल अन्नमय कोश होता है, वनस्पति, जीव और मनुष्यों में अन्नमय और प्राणमय कोश दोनों होते हैं ।

७ प्राण का केन्द्र सूर्य

जिस प्रकार प्रकाश, उष्णता, बिजली और चुम्बक शक्ति का

केन्द्र और आधार (सारे सूर्य मण्डल के लिए) सूर्य है, उसी प्रकार प्राण का केन्द्र और आधार भी सूर्य है। प्रश्नोपनिषद् में लिखा है "आदित्योह वै प्राणः" अर्थात् निश्चय करके सूर्य प्राण है।

८ मनोमय कोश

तैतिरीयोपनिषद् ब्रह्मवल्ली का तीसरा अनुवाक् इस प्रकार है—

तस्माद्वा एतस्मात् प्राणमयात् अन्योऽन्तर आत्मा मनोमयः। तेनैष पूर्णः। सवा एष पुरुष विधएव। तस्य पुरुष विधताम्। अन्वयं पुरुष विधः, तस्य यजुरेव शिरः, ऋग् दक्षिणः पक्षः, सामोत्तरः पक्षः, आदेश आत्मा, अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठाः।"

अर्थ—प्राणमय कोश से भिन्न और उसके भीतर मनोमय कोश है। यह उसमें भरा हुआ है। यह भी मनुष्याकार है, उसकी मनुष्याकारता उसी के सदृश है। *यजुर्वेद उसका शिर है, *ऋग्वेद उसका दाहिना अङ्ग है, *सामवेद उसका बायां अङ्ग है, आदेश धड़ है। *अथर्ववेद उसका पिछला भाग और सहारा है।

९ मनोमय लोक

मनस्तत्व भी प्राण की तरह प्रकृति का एक रूप है, और वह भी सारे आकाश में प्राण की तरह भरा हुआ है। वह प्राण से

---

*मनोमय कोश का मुख्य कार्य ज्ञान प्राप्ति है, 'वेद' शब्द का अर्थ ज्ञान है, और वेद ज्ञान के भण्डार हैं। इसलिए चारों वेद मनोमय कोश के भाग कहे गए हैं।

ऐसा ही सूक्ष्मतर है,जैसे प्राण आकाश से और आकाश वायु से अधिक सूक्ष्म है। मनोमय कोश उसी प्रकार मनस्तत्व का बना हुआ है, जैसे प्राण मय कोश प्राणतत्त्व का बना है, और अन्नमय कोश (वा स्थूल शरीर) पंच भूतों का बना है। मनोमय लोक को स्वर्लोक वा स्वर्ग भी कहते हैं।

वैशेषिक दर्शन के निम्न लिखित सूत्र से यह स्पष्ट है, कि हमारे शास्त्रों के अनुसार मन एक तत्त्व वा द्रव्य है, केवल क्रिया,गुण वा शक्ति नहीं है—"पृथिव्यप् तेजो वाय्वाकाशोकालो दिगात्मा मनांसिद्रव्याणि"

(अर्थ) पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आकाश, काल, देश आत्मा* और मन ये द्रव्य कहलाते हैं। द्रव्य उसको कहते हैं,जिसमें क्रिया और गुण हो। मुण्डकोपनिषद् के नीचे लिखे मंत्र में कहा गया है, कि उस ब्रह्म से प्राण, मन, सब इन्द्रियां और आकाश, वायु अग्नि, जल और पृथ्वी रूपी पदार्थ उत्पन्न हुए।

"एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणिच।
खं वायुर्ज्योतिरापः पृथ्वी विश्वस्य धारिणी॥"

(मुं० उ० २।३)

१० मन और आधुनिक वैज्ञानिक

सर औलिवर लौज Sir Oliver Lodge कृत 'प्राण और प्रकृति' Life and Matter पुस्तक से हम ऊपर कई प्रमाण

---

* आत्मा शब्द का तात्पर्य यहाँ जीवात्मा और परमात्मा दोनों से है।

दे चुके हैं। यह पुस्तक जर्मन के विद्वान् हेकल Haeckel के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ "विश्व की समस्या" The Riddle of the Universe के उत्तर में लिखा गया है। लौज महोदय लिखते हैं कि हेकल ने यह माना है, कि प्रकृति matter और शक्ति force का अभाव नहीं हो सकता और वे किसी न किसी रूप में बने रहते हैं। इस नियम के बहुत से नाम रक्खे हुए हैं। जैसे "सृष्टि का मौलिक नियम" Fundamentel Cosmic Law. "विश्वव्यापक नियम" Universal law। लौज महाशय कहते हैं- "इसी प्रकार प्राण Life मन mind अहंकार consciousness भी अलग पदार्थ क्यों न माने जाँय, क्योंकि विज्ञान science से अभी तक यह सिद्ध नहीं हुआ, कि इनमें से कोई शक्ति Force का रूप है—जैसा कि प्रकाश, उष्णता, गति और बिजली आदि हैं।" एक व्याख्यान में जिसका वर्णन १५ दिसम्बर १९३० के लीडर Leader पत्र में छपा है, सर औलिवर लौज ने इस प्रकार कथन किया—

My doctrine is that life exists in space, that mind is a higher developement of that, and I presume that spirit is a higher development still, but they all exist in space.

अर्थ—"मेरा सिद्धान्त है, कि प्राण आकाश में रहता है और मन उसका उच्चतर विकास है। और मेरा विचार है, कि आत्मा Spirit उससे भी अधिक उच्च विकास है, परन्तु ये सब आकाश में स्थित हैं।" लौज महाशय के इस कथन में आत्मा spirit से

तात्पर्य "विज्ञान" और "आनन्द" का प्रतीत होता है जिनका वर्णन आगे किया जायगा।

११ विचारों की गति

पाठकों ने सुना होगा, कि एक मनुष्य के विचार बिना किसी दृश्य माध्यम meduim के बहुत दूर के मनुष्य तक पहुंच सकते हैं। सर औलिवर लौज ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ The survivial of Man में ऐसे बहुत से उदाहरण दिए हैं, जो आध्यात्मिक खोज करने वाली सभा Society for Psychical Research अथवा अन्य स्वतन्त्र और विश्वस्त लोगों की खोज के अनुसार लिखे गए। इसमें सन्देह नहीं कि एक मनुष्य के विचार बहुत दूर, दूसरे मनुष्य तक पहुंच सकते हैं। प्रश्न यह है, कि वे कैसे पहुँच जाते हैं? कान तक शब्द पहुंचाने के लिये यह आवश्यक है, कि शब्द करने वाली वस्तु और कान के बीच लगातार कोई पदार्थ माध्यम रूप से हो। साधारणतया वायु की तरंगों से शब्द पहुंचता है, इसी प्रकार प्रकाश आकाश रूपी माध्यम के द्वारा फैलता है। अब प्रश्न यह है, कि वह माध्यम कौनसा है, जिसमें होकर एक मनुष्य के विचार दूसरे मनुष्य तक पहुंच जाते हैं? इसका सबसे अच्छा और युक्ति युक्त उत्तर यही हो सकता है, कि मनस्तत्व सारे आकाश में भरा हुआ है, और उसके द्वारा विचार ऐसे ही फैलते हैं, जैसे आकाश के द्वारा प्रकाश, गर्मी और बिजली फैलती है, और वायु के द्वारा शब्द फैलता है।

१२ मन की शीघ्र गति

शिव संकल्प सूक्त के नीचे लिखे मन्त्र में बतलाया गया है, कि मन और विचारों की गति बहुत दूर तक होती है:—

"यज्जाग्रतो दूर मुदैति दैवं तदुसुप्तस्य तथैवैति ।
दूरं गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु ॥
(यजु० ३४।१)

(अर्थ) जो दिव्य गुण युक्त मन जाग्रत अवस्था में दूर तक जाता है, और जो सोते हुए भी उसी प्रकार दूर तक पहुंचता है, वह दूर जाने वाला ज्योतियों का एक ज्योति, मेरा मन अच्छे विचारों वाला होवे ।

मन की इस शीघ्र गति का वर्णन वेदों और उपनिषदों में बहुत वार आया है। ईशोपनिषद् के चौथे मन्त्र में ब्रह्म को "मनसो जवीयः" कहा गया है—अर्थात् 'मन से भी अधिक वेग वाला'। क्योंकि संसार में मन से अधिक वेग वाली कोई वस्तु नहीं। अंग्रेजी में बिजली की शीघ्र गति Lightning speed प्रसिद्ध है। परन्तु मन की गति के साथ उसकी क्या तुलना हो सकती है ? क्योंकि बिजली की चाल एक सेकण्ड में १८६००० मील है, पर विचार वा मन को कुछ भी समय नहीं लगता। उसकी गति बिजली से उतनी ही अधिक है, जैसे मन का वाहन मनस्तत्व, बिजली के वाहन आकाश से अधिक सूक्ष्म है।

१३ मनस्तत्व में तरंगें

अगर हम किसी ताल में एक पत्थर फेंके तो वहाँ चक्राकार

लहरें चारों ओरों को फैलेंगीं। ऐसे ही एक घंटी बजाने से वायु में चारों ओर लहरें फैलती हैं,जिससे घण्टी का शब्द सुनाई देता है। इसी प्रकार एक दीपक जलाने से दीपक के सब ओर आकाश में लहरें उत्पन्न होकर फैलेंगी। इसी प्रकार जब किसी मनुष्य के मन में कोई संकल्प (बुरा या भला) उठता है, तो मनस्तत्त्व में लहरें उत्पन्न होकर चारों ओर दूर दूर तक फैलती हैं।

१८ विचारों की शक्ति

एक अच्छे संकल्प से तीन प्रकार लाभ होते हैं। प्रथम वह विचारकर्त्ता को उसका मनोमय कोश शुद्ध करके लाभ पहुंचाता है। दूसरे वह उस मनुष्य को लाभ देता है, जिसके लिए संकल्प किया गया। तीसरे वह मनस्तत्त्व के वातावरण को शुद्ध करके मनष्य मात्र को लाभ पहुंचाता है। इसके विपरीत बुरे संकल्प से तीन प्रकार हानि होती है। पहले वह संकल्प करने वाले को उसके मनोमय कोश द्वारा हानि पहुँचाता है, दूसरे वह उस व्यक्ति को जिसके लिए वह संकल्प किया हानि पहुँचाता है, यदि उस व्यक्ति में उस बुरे संकल्प को खींचने के लिये कोई दोष हो। तीसरे वह सारे मानसिक वातावरण को अशुद्ध करके मनुष्य मात्र को हानिकारक होता है।

१९ सामूहिक विचारों की शक्ति

संकल्प वा विचारों में बड़ा बल है। यदि कोई विचार एक ही समय में बहुत से मनुष्यों के मन में आवे, तो उसमें और भी अधिक बल हो जाता है, क्योंकि बहुत से मनुष्यों के विचारों से मानसिक वातावरण में जो तरंगें पैदा होती हैं, वे लोगों के मनो-

मय कोश पर प्रभाव डालती हैं। इसी कारण से जनता के विचार और मत का लोगों के मन पर प्रभाव पड़ता है, चाहे वे विचार वाणी द्वारा प्रकट भी न किये गए हों। इसी कारण से सामूहिक प्रार्थना का विशेष महत्त्व होता है। मुख्य संस्कारों में यह विधि है कि संस्कार के अन्त में सब उपस्थित लोग आशीर्वाद देवें। उदाहरण के लिए विवाह संस्कार में यह नियम है, कि सब स्त्री पुरुष जो उपस्थित हों, वर और कन्या को चिरंजीव और सुखी होने का आशीर्वाद दें, और जात कर्म संस्कार में नव जात बालक के दीर्घ जीवन के लिए प्रार्थना करें। ये बातें केवल दिखलावे के लिए नहीं रक्खी गई, किन्तु इनका आधार यह दृढ़ और व्यापक विश्वास है, कि एक शुभ संकल्प में यदि वह शुद्ध हृदय से किया गया हो, और विशेष कर उस समय जब कि वह बहुत से मनुष्यों के मन से उठा हो, तो उसमें बहुत शक्ति होती है। इस बात का हम सब को अनुभव है, कि जब हम किसी ऐसे स्थान में जावें जहां उत्तम विचारों के लोग बहुत संख्या में किसी धार्मिक वा परोपकारी कार्य के लिए इकट्ठे हुए हों, तो हमारे मन में एक विशेप उत्साह और आनन्द उत्पन्न होता है। इसका कारण यही है, कि उस स्थान के मानसिक वातावरण में शुद्ध मानसिक वा आध्यात्मिक लहरें अधिक भरी हुई होती हैं, और वे हमारे मनोमय और उच्चतर कोशों को प्रभावित करती हैं।

१६ मन्दिर और पूजा स्थानों की उपयोगिता

योगियों का उपदेश है, कि हर एक घर में संध्या के लिए एक

अलग कमरा होना चाहिए, जो और किसी काम में न लाया जावे। कारण यह है, कि वहाँ नित्य केवल सन्ध्योपासन के होने से आध्यात्मिक लहरें उत्पन्न होकर उस कमरे के मानसिक वातावरण को शुद्ध कर देंगी, जिससे मन की एकाग्रता और योगाभ्यास के साधनों में सहायता मिलेगी। इसी लिए सब काल और देशों में मनुष्य ईश्वर-प्रार्थना आदि के लिए अलग मन्दिर, मसजिद, गिरजाघर आदि बनाते रहे हैं।

१७ तीर्थों की पवित्रता

तीर्थों की पवित्रता का कारण भी यही है। शुद्ध तत्त्व में लिखा है—

"प्रभावादद्भुताद्भूमेः सलिलस्य च तेजसः।
परिग्रहान्मुनीनाञ्च तीर्थानां पुण्यता स्मृता॥"

अर्थ—भूमि, जल और तेज के अद्भुत प्रभाव से और मुनियों के निवास करने से तीर्थों की पवित्रता मानी गई है।

एक बहुत विद्वान् श्रद्धेय और उच्चकोटि के योगी ने, जिनसे गंगोत्री में पहली बार भेंट करने का मुझको सन् १९२३ में सौभाग्य प्राप्त हुआ था, मुझ से कहा था, कि उन्होंने अपने अनुभव से गंगोत्री के आध्यात्मिक वातावरण को उससे बहुत उच्चतर पाया, जिसका उनको अमरनाथ (काश्मीर) में वा अन्य स्थानों में अनुभव हुआ था। इसका कारण उन्होंने बतलाया, कि हिमालय के उस भाग में जो उत्तराखण्ड कहलाता है, भूतकाल में बहुत से बड़े-बड़े ऋषि मुनियों का निवास रहा, जिसकी आध्या-

त्मिक तरंगें Spiritual Vibrations अब तक वर्तमान हैं। उन्होंने यह भी कहा, कि योगी लोग मानसिक वा आत्मिक तरंगों के भेद को अनुभव से इसी तरह जान सकते हैं, जैसे साधारण शिक्षित मनुष्य किसी स्थान के अच्छे वा बुरे जल-वायु को और दो स्थानों के जल वायु के भेद को पहिचान लेते हैं। प्राचीन समय में इन तीर्थों की पवित्रता का जो कारण था, वह ऊपर बतलाया गया। पौराणिक समय में जब मूर्त्ति-पूजा फैली, तब इन स्थानों में अनेक देवताओं के मन्दिर बन गये।

मनोमय कोश मनुष्य और पशु आदि अन्य जीवधारियों में है। वनस्पतियों में केवल अन्नमय और प्राणमय कोश है।

१८ विज्ञानमय कोश

अब हम चतुर्थ अर्थात् विज्ञानमय कोश का वर्णन करते हैं, जो तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मवल्ली के चौथे अनुवाक् में इस प्रकार है—

"तस्माद् वा एतस्मान्मनो मयात्, अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञान मयः। तेनैष पूर्णः। सवा एष पुरुष विधएव। तस्य पुरुष विधताम्। अन्वयं पुरुष विधः। तस्य श्रद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तरः पक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा।"

अर्थ—उस मनोमय कोश से भिन्न और उसके भीतर विज्ञानमय कोश है, इससे वह भरा हुआ है। ये भी मनुष्याकार है, इसकी मनुष्याकारता उसी के सदृश है, श्रद्धा ही उसका शिर

है, धर्म उसका दक्षिण अङ्ग है, सत्य उत्तर अङ्ग है, योग मध्य भाग है, महः पिछला भाग और सहारा है।

१६ विज्ञानमय लोक

"विज्ञान" का नाम सांख्य में महत्तत्त्व है, और पहिले जो सात लोकों के नाम दिए गए हैं, उनमें इसको महर्लोक कहा है। ये मनस्तत्त्व से अधिक सूक्ष्म हैं, जैसे मनस्तत्त्व प्राण से और प्राण आकाश से अधिक सूक्ष्म है। ये विज्ञान अर्थात् विशेष ज्ञान का वाहन वा माध्यम है, जैसे मनस्तत्व साधारण ज्ञान का वाहन है। विज्ञानमय कोश उसी प्रकार विज्ञान तत्त्व का बना है, जैसे प्राणमय कोश प्राण तत्त्व का और अन्नमय कोश पंच भूतों का बना है। विज्ञानमय कोश केवल मनुष्य में होता है, अन्य जीव-धारी पशु आदि में नहीं।

२० आनन्दमय कोश

अब हम पाँचवें वा अन्तिम अर्थात् आनन्दमय कोश का वर्णन करते हैं, जो तैतिरीयोपनिषद् ब्रह्म वल्ली के पाँचवें अनु-वाक में इस प्रकार कहा गया है—

"तस्माद्वाएतस्माद् विज्ञान मयात्, अन्योऽन्तर आत्मा आनन्द मयः। तेनैष पूर्णः, सवा एष पुरुष विधएव, तस्य पुरुष विधताम्, अन्वयं पुरुष विधः। तस्य प्रिय मेव शिरः, मोदो दक्षिणः पक्षः, प्रमोद उत्तर पक्षः, आनन्द आत्मा, ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठाः।"

(अर्थ) उस विज्ञान मय कोश से भिन्न और उसके भीतर

आनन्द मय कोश है। वह इससे भरा हुआ है। वह मनुष्याकार है, उसकी मनुष्याकारता भी उसी के सदृश है। प्रेम ही उसका शिर है, मोद दक्षिण अंग है, प्रमोद उत्तर अंग है, आनन्द मध्य भाग है, प्रकृति पिछला भाग और सहारा है।

२१ आनन्दमय लोक

आनन्दमय लोक मूल प्रकृति का बना है, जो प्रकृति का सब से अधिक सूक्ष्म रूप है और जिससे शेष सब रूपों का विकास हुआ है। सांख्य दर्शन में उसका लक्षण इस प्रकार किया गया है:—

"सत्त्व रजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः"

अर्थात्—सत्त्व, रज, और तम इन तीन गुणों की साम्य अवस्था का नाम प्रकृति है। वह आनन्द की वाहन है। आनन्द मय लोक के अन्तर्गत जनः तपः और सत्यं लोक हैं।

२२ जीवात्मा कोशों से भिन्न है

कुछ लोगों का मत है, कि आनन्दमय कोई कोश नहीं, किन्तु जीवात्मा का ही नाम है। परन्तु ऋषि दयानन्द का मत स्पष्ट यह है, कि आनन्दमय भी अन्य चार कोशों की तरह एक कोश है। सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में लिखा है:—

"इन सब कोश और अवस्थाओं से जीव पृथक् है।"

विवेक चूड़ामणि में स्वामी शंकराचार्यजी का भी यही मत पाया जाता है—

"पञ्चानामपि कोशानामपवादे विभात्ययं शुद्धः ।
नित्यानन्दैकरसः प्रत्यग्रूपः परंस्वयं ज्योतिः ॥"

(श्लोक १५१)

(अर्थ) पाँचों कोशों से भिन्न प्रत्यगात्मा अर्थात् जीवात्मा नित्य आनन्द एक रस स्वयं ज्योतिः शुद्ध प्रकाशित होता है ।

तैत्तिरीयोपनिषद् में आनन्दमय का वर्णन उसी प्रकार किया गया है, जैसे अन्य चार कोशों का । "कोश" शब्द ही से स्पष्ट है, कि जीवात्मा कोशों से भिन्न और उनके भीतर स्थित है । कोश 'कुश' संश्लेषणे धातु से बनता है, जिसका अर्थ है जुड़ा रहना । कोश तलवार की म्यान को, पक्षी के घोंसले को और रेशम के कीड़े के घर को तथा पात्र (वर्त्तन) को भी कहते हैं । भाव यह है, कि जीवात्मा एक अमूल्य मणि के समान ५ पात्रों वा ढकनों में सुरक्षित है, जिनमें से हर एक भीतर का पात्र बाहर वाले पात्र से अधिक महत्त्व वा मूल्य का है ।

अंश ३

पंचकोश और सांख्य दर्शन

१ सांख्य दर्शन

विकास सिद्धान्त Evolution का सब से प्राचीन ग्रन्थ सांख्यसूत्र है। यह ठीक है कि सांख्य दर्शन की कुछ सामग्री उपनिषदों में पाई जाती है परन्तु उसको एक संगठित दर्शन के रूप में रखना कपिल मुनि ही का कार्य्य था, जैसे योग की सामग्री भी कुछ उपनिषदों में पाई जाती है परन्तु योग दर्शन के कर्त्ता पतञ्जलि मुनि हुए।

२ सांख्य के २५ तत्त्व

सांख्य में नीचे लिखे हुए २५ तत्व गिनाए गये हैं, जिनमें से २४ प्रकृति और उसके रूपान्तर हैं—

"सत्व रज स्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः । प्रकृतेर्महान् महतोऽहंकारोऽहंकाराद् पंच तन्मात्रा एयु भयमिन्द्रियम् । तन्मात्रेभ्यः स्थूल भूतानि । पुरुषः इति पंच विंशतिर्गणः ।"

(सांख्य अ० १ सूत्र ६१)

अर्थ—सत्त्व, रज और तम इन गुणों की साम्य अवस्था प्रकृति है। प्रकृति से महतत्त्व का विकास होता है, महतत्त्व से अहंकार और अहंकार से पंच तन्मात्रा अर्थात् सूक्ष्म भूत और पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय और मन का विकास होता है।

पंच तन्मात्राओं से स्थूल भूत अर्थात् आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी का विकास होता है। ये २४ हुए और *पुरुष को मिलाकर २५ का समूह होता है।

सांख्य कारिका में इन २५ तत्वों के ४ विभाग इस प्रकार किये गए हैं—

"मूल प्रकृति रविकृति, महदाध्याः प्रकृति विकृतयः सप्त।
षोडकस्तु विकारो, न प्रकृति र्न विकृतिः पुरुषः॥"

सां० का० सू० ३

अर्थ—मूल प्रकृति विकार रहित है। महतत्व अहंकार और पंचतन्मात्राः ये सात प्रकृति भी हैं, क्योंकि इनसे आगे के १६ तत्व बनते हैं, और विकार भी हैं क्योंकि ये स्वयं प्रकृति से बने हैं। दस इन्द्रियें मन और पंचभूत केवल विकार हैं। पुरुष न प्रकृति है और न विकार है क्योंकि न वह किसी का उपादान कारण है और न कार्य्य है।

३ सांख्य तत्त्वों का पंचकोशों से मिलान

सांख्य की व्याख्या करना इस पुस्तक का उद्देश्य नहीं। हमको केवल यही दिखलाना है कि ऊपर लिखे तत्त्वों का मिलान पंच कोशों से किस प्रकार होता है। आनन्दमय कोश का सम्बन्ध मूल प्रकृति से है। विज्ञानमय कोश का सम्बन्ध महतत्त्व (अर्थात् बुद्धि) और ५ ज्ञानेन्द्रियों से है। मनोमय कोश के अन्तर्गत अहंकार, मन और ५ कर्मेन्द्रियां हैं। प्राणमय कोश में पंचतन्मात्रा

*पुरुष शब्द—जीवात्मा और परमात्मा दोनों का वाचक है।

और पांच प्राण हैं, और अन्नमय कोश में पंचभूत हैं। ऐसा ही लेख ऋषि दयानन्द का सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में है जो आगे दिया जाता है।

४ सत्यार्थप्रकाश में कोशों का वर्णन

"सत्पुरुषों के संग से 'विवेक' अर्थात् सत्याऽसत्य, धर्माधर्म, कर्त्तव्याऽकर्त्तव्य का निश्चय अवश्य करें, पृथक् पृथक् जानें और शरीर अर्थात् जीव पंचकोशों का विवेचन करे। एक अन्नमय जो त्वचा से लेकर अस्थि पर्यन्त का समुदाय पृथ्वीमय है। दूसरा प्राणमय जिसमें 'प्राण' अर्थात् जो भीतर से बाहर जाता 'अपान' जो बाहर से भीतर आता, 'समान' जो नाभिस्थ होकर समस्त शरीर में रस पहुँचाता, 'उदान' जिससे कंठस्थ अन्नपान खैंचा जाता और बल पराक्रम होता है, 'व्यान' जिससे सब शरीर में चेष्टा आदि कर्म जीव करता है। तीसरा 'मनोमय' जिसमें मन के साथ अहंकार वाक्, पाद्, पाणि, पायु और उपस्थ पांच कर्म-इन्द्रियां हैं। चौथा 'विज्ञानमय' जिसमें बुद्धि, चित्त, श्रोत्र, त्वचा नेत्र जिह्वा और नासिका यह पांच ज्ञानेन्द्रियां हैं जिनसे जीव ज्ञानादि व्यवहार करता है। पांचवा 'आनन्दमय कोश' जिसमें प्रीति, प्रसन्नता, न्यून आनन्द, आनन्द और आधार कारण रूप प्रकृति है। ये पांच कोश कहाते हैं। इन्हीं से जीव सब प्रकार के कर्म, उपासना और ज्ञानादि व्यवहारों को करता है।"

(स० प्र० समु० ९ पृष्ठ ३००)

अंश ४

पंचकोश और थियोसोफी

१ थियोसोफी के साहित्य में सप्त लोक

थियोसोफिकल सोसायटी का मन्तव्य है कि मनुष्य के शरीर तथा संसार में सात लोक Planes हैं। विशप लेडबीटर Bishop-Leadbeater कृत Man visible and Invisible (दृश्य और अदृश्य पुरुष) नामक पुस्तक में उनके नाम इस प्रकार दिये गए हैं—

1 Physical भौतिक — Dense body, Etheric Double } भौतिक शरीर

2 Astral प्राणमय Astral body प्राणमय शरीर

3 Mental — Rupa, Arupa } मनोमय — Mental body } मानस शरीर; Causal body } कारण शरीर

4 Buddhic विज्ञानमय Intuition विज्ञान

5 Nirvanic आनन्दमय Spirit आत्मा

6 Paranirvanic परनिर्वाणिक

7 Mahaparanirvanic महा परनिर्वाणिक

यह स्पष्ट है कि पहले पांच लोक Planes और पंचकोश बिलकुल एक ही हैं। थियोसोफिस्ट लोगों का मत है कि मनुष्य अभी इतना उन्नत नहीं हुआ कि अन्त के दो लोकों में कार्य कर सके।

२ पंचकोश और सात तत्त्व Principles,

थियोसोफिस्ट लोग पांच कोशों में सात तत्त्व principles मानते हैं। वे अन्नमय कोश के २ भाग करते हैं, एक स्थूल शरीर dense body जो केवल चार भूत (पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु) का बना है और दूसरा आकाशिक शरीर Etheric Double जो स्थूल शरीर का ठीक प्रति कृति माना जाता है, परन्तु केवल आकाश तत्त्व का बना हुआ है। इसी प्रकार मनोमय कोश के वे दो भाग करते हैं अर्थात् एक मानस शरीर जो रूप नामक साधारण वा अशुद्ध मनस् का बना हुआ है, और दूसरा कारण शरीर जो अरूप नामक शुद्ध मनस् का बना हुआ है।

इन सात तत्वों के दो वर्ग हैं, एक जिसमें ऊपर के तीन तत्त्व अर्थात् आत्मा, बुद्धि और शुद्ध मनस् है। इस त्रिवर्ग का नाम Ego वा आत्मा है, और यह अमर कहा जाता है। दूसरे वर्ग में नीचे के चार तत्त्व अर्थात् अशुद्ध मनस्, काम (वा प्राणमय शरीर), आकाशिक शरीर और स्थूल शरीर हैं। इस चतुवर्ग का Personality (पुरुषत्व वा व्यक्तित्व) कहते हैं और यह मरण शील हैं।

३ प्राणमय लोक का वर्णन

थियोसफी के साहित्य में इन सात तत्वों की और विशेष कर प्राणमय और मनोमय लोकों की विस्तार के साथ व्याख्या की गई है। उसके विषय में कहा जाता है कि जो लोग योग बल से

अपने प्राणमय और मनोमय शरीरों की इन्द्रियों का उपयोग कर सकते हैं वे उन दोनों लोकों को उसी प्रकार देख सकते हैं जैसे साधारण मनुष्य स्थूल जगत को देखते हैं, और उन दोनों लोकों का वर्णन ऐसे योगियों Clairvoyants के अनुभव पर किया हुआ माना जाता है। प्राणमय लोक का नाम काम लोक है। जब कोई मनुष्य मरता है तो वह केवल भौतिक शरीर को (जिसमें स्थूल शरीर और आकाशिक शरीर दोनों शामिल हैं) छोड़ देता है। आकाशिक शरीर कुछ समय तक शव के आसपास बना रहता है और शव के दाह होने पर वा कब्र में सड़ जाने पर उसका भी नाश हो जाता है। इस लोक में मृत्यु होने पर आत्मा की जागृति प्राणमय लोक में होती है जहां उसके मित्र और सम्बन्धी जो पहले से इस लोक को छोड़ चुके उसका स्वागत करते हैं। प्राणमय लोक में उन आत्माओं के सिवाय जो इस लोक से भौतिक शरार को छोड़कर जाती हैं और भी चेतन जीवधारी रहते है। प्राणमय लोक और मृत्यु लोक दोनों एक दूसरे के भीतर बाहर हैं, परन्तु दानों की प्रकृति के रूप भिन्न होने से एक में रहने वाले दूसरे के निवासियों को जान नहीं सकते। (देखो डाक्टर ऐनीवेसेन्ट कृत Death and After पृष्ठ ३०) प्राणमय लाक में कुछ आत्माएं अधिक समय तक रहती हैं कुछ कम समय तक, यह उन आत्माओं के पूर्व संस्कार आदि पर निर्भर है। जिस आत्मा में काम, क्रोध, ईर्षा, द्वेष, लोभ, मोह आदि प्रबल होते हैं उसको वहां अधिक समय तक रहना पड़ता

है और वहाँ रह कर इन कुवासनाओं की यातना भोगने पर उसके यह दोष कम हो जाते हैं।

थियासफी का मत है कि मनुष्य जो इस लोक में कुछ अन्तरावेश Spiritualistic साधनों द्वारा आत्माओं को बुलाकर उनसे बातचीत करते हैं वे आत्माएं प्राणमय लोक ही से आती हैं। परन्तु थियोसोफिस्ट लोग ऐसे साधनों को अच्छा नहीं मानते। उनका विश्वास है कि इस प्रकार आत्माओं को बुलाने और बातचीत करने से उनकी उन्नति और सुधार में बाधा पड़ती है। (देखो डाक्टर बेसेण्ट कृत Death and After पृष्ठ ३४ और ३६)

४ थियोसफी में मनोमय लोक का वर्णन।

प्राणमय वा कामलोक में किसी आत्माके रहने का समय जब अन्त होने को होता है, तो उसकी दशा स्वप्न या अचेतनता की सी हो जीती है, और तब उसको जागृति सुख और शान्तिपूर्वक मनोमय लोक में होती है, जिसको देवचान Devachan. अर्थात् देवस्थान कहते हैं। उसका प्राणमय शरीर कामलोक में उसी प्रकार नष्ट होजाता है, अर्थात् प्राणतत्व में मिल जाता है, जैसे इस लोक में भौतिक शरीर नष्ट होकर पंच भूतों में मिल जाता है। देवचान का वर्णन पुराणों में वर्णित, स्वर्गलोक से मिलता जुलता है। डाक्टर बेसेन्ट ने पूर्वोक्त पुस्तक में लिखा है कि इस लोक में रहकर आत्मा अपनेपूर्व अनुभव और संस्कारों की जाँच खोज करता है और मृत्युलोक की अपेक्षा अधिक

स्वतन्त्र और सुखमय जीवन भोग करता है। (देखो पृष्ठ ५८)। उस लोक में भूख और प्यास नहीं लगती। देवचान मनोमय लोक होने से उसमें आत्मा जिस सुखका भोग करना चाहे, केवल संकल्प मात्र से कर सकता है। जिन आत्माओं का मनोमय कोश उन्नत है, और जिन्होंने भौतिक शरीर में रहकर परोपकार अधिक किया वे आत्मायें उक्त लोक में अधिक समय तक रहती हैं। थियोसफी के अनुसार जीवात्मा जब मृत्युलोक वा स्थूल जगत् में पुनर्जन्म के लिए आता है तो साधारणतया उक्त मनोमय लोक से लौटकर आता है॥

अंश ५

पंचकोश और शरीर त्रय

१ तीन शरीर

शास्त्रों में तीन शरीरों का भी वर्णन है अर्थात् (१) स्थूल शरीर (२) सूक्ष्म वा लिङ्ग शरीर (३) कारण शरीर। स्थूल शरीर और अन्नमय कोश एक ही हैं। सूक्ष्म वा लिङ्ग शरीर में प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोश शामिल हैं। कारण शरीर आनन्दमय कोश को कहते हैं। सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में इन शरीरों का वर्णन इस प्रकार किया गया है:—"तीन शरीर हैं, एक 'स्थूल' जो यह दीखता है। दूसरा पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच सूक्ष्म भूत और मन तथा बुद्धि इन सत्तरह तत्वों का समुदाय 'सूक्ष्म शरीर' कहाता है। यह सूक्ष्म शरीर जन्म मरणादि में भी जीव के साथ रहता है, इसके दो भेद हैं एक भौतिक अर्थात् जो सूक्ष्म भूतों के अंशों से बना है। दूसरा स्वाभाविक, जो जीव के स्वाभाविक गुण रूप है। यह दूसरा अभौतिक शरीर मुक्ति में भी रहता है। इसीसे जीव मुक्ति में सुख को भोगता है। तीसरा 'कारण' जिसमें सुषुप्ति अर्थात् गाढ़ निद्रा होती है। वह प्रकृति रूप होने से सर्वत्र विभु और सब जीवों के लिए एक है। चौथा 'तुरीय' शरीर वह कहाता है जिसमें समाधि से परमात्मा के आनन्द स्वरूप में मग्न जीव

होते हैं, इसी समाधि संस्कार जन्य शुद्ध शरीर का पराक्रम मुक्ति में भी यथावत् सहायक रहता है ।"

श्वेताश्वतरोपनिषद् में स्थूल और सूक्ष्म शरीरों का वर्णन इस प्रकार आया है—"स्थूलानि सूक्ष्माणि वहूनि चैव रूपाणि देही स्व गुणैर्वृणोति । क्रिया गुणैरात्म गुणैश्च तेषां संयोग हेतुरपरोपि दृष्टः ॥ (श्वे० ५।१२)

अर्थ—देहवान् आत्मा बहुत से स्थूल और सूक्ष्म शरीरों वा रूपों को अपने गुणों से और अपने कर्म और उनके गुणों के अनुसार प्राप्त करता है । परन्तु इन शरीरों के संयोग अर्थात् जन्मों का कारण परमात्मा ही है ।

२ तीन अवस्थायें

पूर्वोक्त तीन शरीरों का सम्बन्ध तीन अवस्थाओं से है जिनका वर्णन माण्डूक्योपनिषद् में किया गया है, अर्थात् (१) जागृत अवस्था जिसका सम्बन्ध स्थूल शरीर से है, (२) स्वप्न अवस्था जिसका सम्बन्ध सूक्ष्म शरीर से है। और (३) सुषुप्ति अवस्था जिसका सम्बन्ध कारण शरीर से है । जागृत अवस्था में तीनों शरीर काम करते हैं । स्वप्न अवस्था में सूक्ष्म और कारण शरीर काम करते हैं, स्थूल शरीर कुछ नहीं करता । सुषुप्ति में केवल कारण शरीर काम करता है, और वही निद्रा का आनन्द भोगता है जिससे जागने पर मनुष्य कहता है कि मैं सुख से सोया ।

३ आत्मा के चार पाद ।

माण्डूक्योपनिषद् में परमात्मा के सर्वोत्तम नाम ओ३म् को

व्याख्या है। ओ३म् शब्द अ, उ, म् इन तीन अक्षरों से बना है, जिनको उपनिषद् में तीन मात्रा कहा है। प्रत्येक मात्रा आत्मा के एक पाद का संकेत रूप है। आत्मा के प्रथम तीन पाद इस प्रकार हैं:—

वैश्वानर वा विश्व जिसका सम्बन्ध जागृत अवस्था और स्थूल शरीर से है, और जिसकी मात्रा अकार है।

(२) तैजस जिसका सम्बन्ध स्वप्न अवस्था और सूक्ष्म शरीर से है, और जिसकी मात्रा उकार है।

(३) प्राज्ञ जिसका सम्बध सुषुप्त अवस्था और कारण शरीर से है, और जिसकी मात्रा मकार है।

आत्मा का चौथा पाद अमात्र है, उसका सम्बध तुरीय अवस्था आर तुरीय शरीर से है, जिसका वर्णन सत्यार्थप्रकाश में किया गया, और उसका संकेत पूर्ण ओंकार हो।

पूर्वोक्त चार पाद का सम्बध जीवात्मा और परमात्मा दोनों से है, और उपनिषत् कार ने अलंकार रूप से ऊपर लिखी चारों अवस्थाओं को भी जीवात्मा और परमात्मा दोनों में घटाया है। इस बात को दिखलाने के लिऐ उक्त उपनिषद् के कुछ वाक्य नीचे दिए जाते हैं—

"जागरित स्थानो वहिः प्रज्ञः सप्तांग एकोनविंशति मुखः स्थूल भुग्वैश्वानरः प्रथमः पादः ॥ ३ ॥

स्वप्नस्थानोऽन्तः प्रज्ञः सप्ताँग एकोनविंशति मुखः प्रविविक्त भुक् तैजसो द्वितीयः पादः ॥ ४ ॥

यत्र सुप्तो न कंचन कामं कामयते न कंचन स्वप्न पश्यति

तत्सुषुप्तम् । सुषुप्त स्थान एकी भूतः प्रज्ञानघन एवानन्द मयो-ह्यानन्द भुक् चेतो मुखः प्राज्ञ स्तृतीयः पादः ॥ ५ ॥

एष सर्वेश्वर एष सर्वज्ञ एषोऽन्तर्याम्येष योनिः सर्वस्य प्रभवाप्ययोहि भूतानाम् ॥ ६ ॥

नान्तः प्रज्ञं न वहिः प्रज्ञं नोभयतः प्रज्ञं न प्रज्ञान घनं न प्रज्ञं नाप्रज्ञ मदृष्टमव्यहार्यमग्राह्यमलक्षणमचिन्त्यमव्यपदेश्य मेकात्म्य प्रत्यय सारं प्रपंचोपशमंशान्तंशिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते। स आत्मा स विज्ञेयः ॥ ७ ॥

(अर्थ) जागृत अवस्था में जीवात्मा वहिर्मुख होता है। उसकी चेतना स्थूल शरीर में होती है। उसी प्रकार जागृत स्थान में परमात्मा की विभूति बाहरी जगत में देखी जाती है। वह *सात अगोंवाला औ १९ मुख वाला स्थूल जगत् का पालक वैश्वानर अर्थात् विश्व का नियन्ता है। यह पहिला पाद है। ३। सृष्टि पालन करते हुए परमात्मा जागृत अवस्था में कहा जाता है) ॥ जैसे जीवात्मा स्वप्नावस्था में अन्तर्मुख होता है, उसकी चेतना सूक्ष्म शरीर में होती है, ऐसे ही परमात्मा स्वप्न स्थान में सृष्टि रचना का संकल्प करता हुआ भीतर चेतना वाला होता है।

---

* ब्रह्मॉड रूपी परमात्मा के ७ अंगों का वर्णन अथर्ववेद के नीचे लिखे मन्त्रों में किया गया है जिसकी व्याख्या श्री प० गुरुदत्तजी ने बड़ी विद्वत्ता और सुन्दरता से माण्डूक्योपनिषद् के भाष्य में की है।

उसके *सातअंग और उन्नीस मुख हैं। वह सूक्ष्म जगत् का नियन्ता तैजस अर्थात् तेजवाला है यह दूसरा पाद है।४। (सृष्टि रचते समय परमात्मा स्वप्न वा विचार अवस्था में कहा जाता है।)

जिस अवस्था में सोया हुआ मनुष्य किसी वस्तु की कामना नहीं करता, न कोई स्वप्न देखता है वह सुपुप्त अवस्था है। परमात्मा सुपुप्त अवस्था में एक, अद्वितीय, ज्ञान स्वरूप, आनन्दमय, अति सूक्ष्म जगत् (आनन्द मय लोक) का पालक, चैतन्य स्वरूप और प्राज्ञ है। यह तीसरा पाद है। (प्रलय काल में परमात्मा सुपुप्त अवस्था में कहा जाता है।)॥ ५ ॥

---

* "यस्यभूमिः प्रमान्तरिक्षमुतोदरम् ।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥
यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्चपुनर्णवः ।
अग्निं यश्चक्र आस्यंतस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥
यस्य वातः प्राणापानौचक्षुरङ्गिरसोभवन् ।
दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानी स्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥
(अथर्व १०।२३।४। मन्त्र ३२-३४)

---

* ब्रह्माण्ड रूपी परमात्मा के १९ मुख हैं ये हैं:— ५ ज्ञानेन्द्रिय, ५ कर्मेन्द्रिय, ५ प्राण और ४ अन्तःकरण अर्थात् मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार।

अर्थ—भूमि जिसके पाद हैं, अन्तरिक्ष जिसका उदर है, आकाश जिसका मूर्धा है, उस सबसे बड़े ब्रह्म को नमस्कार है।

सूय और चन्द्र जिसके चक्षु हैं, अग्नि जिसका मुख है, उस सबसे बड़े ब्रह्म को नमस्कार है। वायु जिसका प्राण अपान है, दिशायें जिसके श्रोत्र हैं, उस सबसे बड़े ब्रह्म को नमस्कार है॥

यह सुषुप्त स्थानीय परमात्मा सब का ईश्वर है। यह सर्वज्ञ है; यह अन्तर्यामी है। यह सब का कारण है, और सब भूतों की उत्पत्ति और लय करने वाला है।६॥(वैश्वानर रूप से परमात्मा स्थूल जगत का नियन्ता, तैजस रूप से सूक्ष्म जगत का नियन्ता कहा गया है। प्राज्ञ रूप से वह सब का नियन्ता सब का अन्तर्यामी, और सब का कारण कहा गया है। वेदान्त के ग्रन्थों में ब्रह्म का नाम जागरित स्थान में विराट्, स्वप्न स्थान में हिरण्य गर्भ, और सुषुप्त स्थान में ईश्वर कहा है।)

तुरीय अवस्था में परमात्मा न भीतर चेतना वाला है, न बाहर चेतना वाला है, न ज्ञान स्वरूप, न अज्ञान स्वरूप है। वह न देखा जा सकता है, न व्यवहार में आ सकता है, न ग्रहण हो सकता है, न लक्षण करने योग्य है, न चिन्तन किया जा सकता है। न बताया जा सकता है। वह एक आत्मा है। ऐसा जानना ही सार है। वह प्रपंच से रहित है। शान्त, कल्याणमय और अद्वैत है। ऐसा चौथे पाद और चौथी अवस्था को ब्रह्मज्ञानी मानते हैं। वह वास्तविक आत्मा है, और वही जानने योग्य है।७॥

जीवात्मा और परमात्मा के चार पाद वा अवस्थाओं का मिलान।

प० गुरुदत्तजी ने अपनी माण्डूक्योपनिषद् की व्याख्या में

जीवात्मा और परमात्मा की चार अवस्थाओं का वर्णन बड़ी योग्यता से किया है। पाठक उसको वहीं देखें। उक्त पण्डितजी ने एक घड़ीसाज़ का दृष्टांत देकर यह बतलाया है कि घड़ी के देखने से घड़ीसाज़ की चतुराई का जो ज्ञान होता है, वह उसकी जागृत अवस्था का है जो सबसे बाहरी दशा है। परन्तु घड़ी के बनाते समय जो संकल्प और विचार उसके मन में होते हैं यह उसकी Contemplative विचार वा स्वप्न अवस्था है। इससे भी अधिक आन्तरिक उसके आत्मा और बुद्धि में जो जो विज्ञान और शिल्पकला का ज्ञान भरा हुआ है वह उसकी सुषुप्त अवस्था का द्योतक है। उससे भी परे उसका वास्तविक आत्मा है, जिसकी पूर्व लिखित केवल अवस्थायें हैं। इसी प्रकार स्थूल जगत् में जो परमात्मा की शक्ति का चमत्कार दिखलाई देता है जैसे सूर्य, चन्द्र, तारागण आदि का निरन्तर भ्रमण, दिन रात ऋतु आदि का नियमानुसार होना, मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, वनस्पति आदि का उत्पन्न होना बढ़ना आदि यह,—परमात्मा की जागृत अवस्था का चिन्ह है। सृष्टि से पूर्व वा सृष्टि करते समय परमात्मा में जो सृष्टि का संकल्प Design होता है, अथवा परमात्मा में सृष्टि के नियमों के जो अनादि और नित्य विचार Eternal Ideas रहते हैं वे उसकी स्वप्नावस्था के द्योतक हैं। इन विचारों से भी परे परमात्मा का जो आन्तरिक स्वरूप है वह उसकी सुषुप्त अवस्था है, जिसमें परमात्मा को सर्वेश्वर, सर्वज्ञ, अन्तर्यामी, सृष्टिकर्ता और संहर्ता कहा गया है। परन्तु परमात्मा का वास्तविक स्वरूप इससे भी परे है जो अनिर्वचनीय है।

स्थूल जगत् में जो परमात्मा का ऐश्वर्य है उसका ज्ञान हमको स्थूल शरीर की इन्द्रियों द्वारा होता है। सूक्ष्म जगत् में जो परमात्मा की विभूति है उसका अनुभव सूक्ष्म शरीर द्वारा हो सकता है। कारण शरीर द्वारा हमको परमात्मा के आन्तरिक स्वरूप और उस वैभव का ज्ञान हो सकता है जो अति सूक्ष्म जगत् में है। परन्तु ईश्वर का वास्तविक स्वरूप जानने अर्थात् परमात्मा का साक्षात्कार करने के लिए इन तीनों शरीरों से परे जाना आवश्यक है, और इसलिए ७ वें मन्त्र में परमात्मा को अदृष्ट, अग्राह्य, अचिन्त्य आदि शब्दों से वर्णन किया है। १२ वें मन्त्र में इस तुरीय स्वरूप का वर्णन इस प्रकार किया गया है।

"अमात्रश्चतुर्थोऽव्यवहार्य्यः प्रपंचोपशमः शिवोऽद्वैतः एव मोङ्कार आत्मैव संविशत्यात्मनाऽऽत्मानं य एवं वेद य एवं वेद ॥"

अर्थ—परमात्मा का चतुर्थ स्वरूप अमात्र है। वह व्यवहार में नहीं आ सकता, प्रपंच से रहित है। कल्याणमय और अद्वैत है। वह पूर्ण ओंकार है। वही वास्तविक परमात्मा है। जो इस प्रकार (इस तुरीय स्वरूप से) उसको जान लेता है, वह आत्मा से परमात्मा में प्रवेश करता है (अर्थात् मोक्ष को प्राप्त कर लेता है)॥

यहां दो बातें ध्यान देने योग्य हैं। एक यह कि मोक्ष की प्राप्ति के लिए परमात्मा का वास्तविक स्वरूप जानना आवश्यक है जिसको उपनिषद् में अमात्र वा चतुर्थ कहा है। दूसरा यह कि

वह आत्मा ही से अर्थात् तुरीय अवस्था में जाना जाता है जिसमें पंचकोश वा तीनों शरीर सब छूट जाते हैं और जीवात्मा त्रिगुणातीत होकर और प्रकृति से बिलकुल अलग होकर परमात्मा में मिल जाता है। इसको उपनिषत्कार ने "संविशत्यात्मनाऽत्मानम्" (अर्थात् 'आत्मा से आत्मा में प्रवेश करता है') शब्दों से स्पष्ट बतलाया है। यही मोक्ष की वा जीवन मुक्त की अवस्था है।

इससे पाठक गण पंचकोश और तीन शरीरों के ज्ञान की उपयोगिता को और उनको उन्नत और शुद्ध बनाने की आवश्यकता को समझ सकेंगे, इस विषय पर कुछ आगे भी अंश ८ में कहा जायगा।

५ संयुक्त चित्र

इस स्थान पर एक तुलनात्मक चित्र देना उत्तम होगा जिसमें तीन शरीर, तीन अवस्था, चार पाद, पांच कोश, सात लोक थियोसफी के सात तत्व और सांख्य के २४ तत्वों का (जिनका ऊपर वर्णन किया जा चुका है) परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट रूप से प्रकट हो जायगा। (देखो पृष्ठ ५०)॥

अंक ६

पंच कोश शरीर त्रय और वेदान्त

१ आत्म बोध में शरीर त्रय का वर्णन ।

पंचकोश और तीन शरीरों का वर्णन वेदान्त के बहुत से ग्रन्थों में आता है जैसे आत्म बोध, तत्त्वबोध, विवेक चूड़ामणि जो स्वामी शङ्कराचार्यजी के लिखे हुए माने जाते हैं, तथा पंचदशी आदि। आत्म बोध में शरीरत्रय का वर्णन इस प्रकार है:—

पंचीकृत महाभूत सम्भवं कर्म संचितम् ।
शरीरं सुख दुःखानां भोगायतनमुच्यते ॥११॥
पंच प्राण मनो बुद्धि दशेन्द्रिय समन्वितम् ।
अपंची कृत भूतोत्थं सूक्ष्माङ्गं भोग साधनम् ॥१२॥
अनाद्यविद्या निर्वाच्या कारणोपाधि रुच्यते ।
उपाधि त्रितयादन्यमात्मानमवधारयेत् ॥१३॥

अर्थ—पंचभूतों से बना हुआ शरीर जो पूर्व संचित कर्मों के अनुसार मिलता है, और जिसमें सुख दुःख भोगे जाते हैं वह स्थूल शरीर है ॥११॥ जो सूक्ष्म भूतों का बना हुआ शरीर है, जो भोगों का साधन है, और जिसमें पंच प्राण मन, बुद्धि और दश इन्द्रियां रहती हैं वह सूक्ष्म शरीर है ॥१२॥ जो अनादि प्रकृति का बना है वह कारण शरीर है। आत्मा इन तीनों उपाधि से अन्य है ॥१३॥

२ विवेक चूड़ामणि में शरीरों का वर्णन ।

विवेक चूड़ामणि में इस प्रकार लिखा है—"पंच कृतेभ्यो भूतेभ्यः स्थूलेभ्यः पूर्व कर्मणा । समुत्पन्न मिदं स्थूलं भोगायतन मात्मनः ॥ अवस्था जागरस्तस्यस्थूलार्थानुभवोयतः ॥८६॥

वागादि पंच श्रवणादि पंच, प्राणादि पंचा भ्र मुखानि पंच । बुद्धयाद्य विद्यापिच काम कर्मणी, पुर्यष्टकं सूक्ष्म शरीर माहुः ॥९६॥

अर्थ—स्थूल शरीर पूर्व कर्मों के अनुसार मिलता है। स्थूल भूतों से बना है, और जीवात्मा के भोग का आधार है ॥ ८८ ॥ वाणी आदि पंच कर्मेन्द्रिय, श्रोत्रादि पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच प्राण बुद्धि आदि इच्छा और कर्म इन आठ पुरियों का सूक्ष्म शरीर कहलाता है ॥ ९६ ॥

३ विवेक चूड़ामणि में कोश वर्णन ।

पाँच कोशों का वर्णन विवेक चूड़ामणि में इस प्रकार किया गया है—

देहोऽयमन्नभवनोऽन्नमयस्तु कोश
श्चान्नेन जीवति विनश्यति तद्विहीनः ॥
त्वक् चर्म मांस रुधिरास्थि पुरीष राशि
र्नायं स्वयं भवितुमर्हति नित्य शुद्धः ॥१५४॥
कर्मेन्द्रियै पंचभिरञ्चितोऽयम् ।
प्राणोभवेत् प्राणमयस्तुकोशः ॥
येनात्मवानन्नमयोऽन्नपूर्णात् ।
प्रवर्ततेऽसा सकलं क्रियासु ॥१६५॥

ज्ञानेन्द्रियाणि च मनश्च मनोमयः स्यात् ।
कोशो ममाह मिति वस्तु विकल्प हेतुः ॥
संज्ञादि भेद कलना कलितो बलीयान् ।
तत्पूर्व कोश मभि पूर्वविजृम्भतेयः ॥१६७॥
बुद्धिर्बुद्धीन्द्रियैः साद्धम् ।
स वृत्तिः कर्तृ लक्षणः ।
विज्ञानमयः कोशः स्यात्पुंसः संसारकारणम् ॥१८४॥
आनन्द प्रतिबिम्ब चुम्बित तनुः ।
वृत्ति स्तमो जृम्भिता स्यादानन्दमयः प्रियादि
गुणकः स्वेष्टार्थ लाभोदयः ।
पुण्यस्यानु भवेविभाति कृतिना ॥
मानन्दरूपः स्वयं । सर्वोनन्दाति यत्र साधु
तनुभृन्मात्रं प्रयत्नं बिना ॥२०७॥

अर्थ—अन्नमय कोश अन्न का बना है। अन्न से जीवित रहता है, और बिना अन्न के नष्ट हो जाता है। इसमें त्वचा चर्म मॉस रुधिर हड्डी आदि पदार्थ हैं, और नित्य शुद्ध जीवात्मा इससे भिन्न है ॥१५४॥

पॉच प्राण पॉच कर्मेन्द्रियों के मिलने से प्राणमय कोश बनता है। उससे पूर्ण होकर अन्नमय कोश सब क्रियाओं में लगता है ॥१६५ ज्ञानेन्द्रियऔर मन के योग से मनोमय कोश होता है जो ममता और अहंता आदि विकल्पों का हेतु है। नाम आदि के भेद भी इसी से होते हैं। ये बलवान् है और प्राणमय कोश

के भीतर प्रकाशित होता है ॥१६७॥ ज्ञानेन्द्रिय और बुद्धि अपनी वृत्तियों सहित जिनका लक्षण कर्तृत्व है, विज्ञानमय कोश कहलाती हैं, जो मनुष्य आवागमन् अर्थात् पुनर्जन्म का कारण है। आनन्द मय कोश अविद्या वा प्रकृति का बना हुआ है, जो आनन्द स्वरूप आत्मा के प्रतिविम्ब से प्रकाशित होता है। प्रिय आदि उसके गुण हैं। जब इच्छा के अनुकूल पदार्थों की प्राप्ति होती है तब उसका उदय होता है। अच्छे कर्म वाले मनुष्यों के पुण्य का अनुभव होने पर प्रकाशित होता है, और बिना प्रयत्न के मनुष्य को पूर्ण आनन्द देता है ॥२०७॥

पैङ्गलोपनिषद् में पंचकोश और शरीरों का वर्णन।

पैङ्गलोपनिषद् में कोश और शरीरों कावर्णन इस प्रकार है:-

"अन्नर से नैव भूत्वान्नर से नाभिवृद्धिं प्राप्यान्न रसमय पृथिव्यां यद्विलीयते सो अन्नमयकोशस्तदेव स्थूल शरीरम्। कर्मेन्द्रियैः सह प्राणादिपंचकं प्राणमयकोशः। ज्ञानेन्द्रियैः सहमनो मनोमयः कोशः। ज्ञानेन्द्रियैः सहबुद्धिर्विज्ञान मयः कोशः। एतत् कोशत्रयं लिङ्ग शरीरम्। स्वरूपाज्ञानमानन्दमयः कोशः। तत्कारण शरीरम्"।

अर्थ—अन्न रस से बनकर अन्नरस से वृद्धि पाकर, जो अन्न रसमय पृथ्वी आदि में विलीन हो जाता है, वह अन्नमय कोश है। इसी को स्थूल शरीर कहते हैं। कर्मेन्द्रियों के साथ पंच प्राणों का नाम प्राणमय कोश है। ज्ञानेन्द्रियों के साथ बुद्धि का नाम विज्ञानमय कोश है। इन तीनों कोशों के समूह को लिंग शरीर कहते हैं। अपने स्वरूप सेअज्ञानमय आनन्द कोश है, उसी को कारण शरीर कहते हैं।

विवेकचूड़ामणि और पैङ्गलोपनिषद् में कर्मेन्द्रियों को प्राणमय कोश में रक्खा, और ज्ञानेन्द्रियों को मनोमय और विज्ञानमय दोनों कोशों में शामिल किया है। सत्यार्थप्रकाश के अनुसार कर्मेन्द्रियां मनोमय कोश में और ज्ञानेन्द्रियां विज्ञानमय कोश के अन्तर्गत हैं।

वेदान्त के ग्रन्थों में जन्म और मरण अन्नमय कोश के धर्म बतलाये गये हैं। भूख और प्यास, इच्छा, द्वेष काम, क्रोध आदि प्राणमय से सम्बन्ध रखते हैं। Mesmerism, Hipnotism, संमोहन वशीकरण आदि का सम्बन्ध भी इसी कोश से है। हर्ष, शोक, संकल्प, विकल्प, मनोमय कोश के धर्म हैं। प्रेम, आनन्द और निद्रा आनन्द मय कोश के धर्म हैं। मृत्यु के समय जीवात्मा केवल अन्नमय कोश अर्थात् स्थूल शरीर को छोड़कर शेष चारो कोश वा दो शरीर सहित जाता है।

अंश ७

पंच कोश और अष्टांग योग

१ यम और नियमों का महत्त्व।

योग के आठ अङ्ग इस प्रकार हैं—

(१) यम (२) नियम (३) आसन (४) प्राणायाम् (५) प्रत्याहार (६) धारणा (७) ध्यान (८) समाधि।

यम पांच हैं, अर्थात् अहिंसा, सत्य, अस्तेय, (चोरी त्याग) ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। ये सामाजिक धर्म हैं, अर्थात् यह बतलाते हैं कि मनुष्य को दूसरों के साथ किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए। नियम भी पांच हैं, अर्थात् शौच, संतोष, तप, स्वध्याय, और ईश्वर प्रणिधान। ये वैयक्तिक धर्म है, अर्थात् यह बतलाते हैं कि मनुष्य को अपने लिए क्या कर्त्तव्य है। योग के अष्टाङ्गों में यम और नियमों को पहिला स्थान देने का अभिप्राय यह है कि जबतक मनुष्य इनका पालन करके अपना चरित्र शुद्ध न करे तब तक वह योगाभ्यास करने का अधिकारी नहीं, अर्थात यम और नियम योग के लिए पहली सीढ़ियां हैं, जिनके द्वारा मनुष्य योग रूपी मन्दिर में प्रवेश करने का अधिकारी होता है। वास्तव में योग साधन का आरम्भ आसन से होता, जो तीसरा अङ्ग है।

२ आसन और अन्नमय कोश ।

पातंजल योग दर्शन में आसन का लक्षण केवल यह किया है—"स्थिर सुख मासनम्" अर्थात् आसन ऐसा होना चाहिए, जो स्थिर हो और जिसमें सुख से बैठा जाय। परन्तु योग के अन्य ग्रन्थों में शारीरिक व्यायाम रूप से ८४ आसन बतलाये गये हैं, जिनका उद्देश्य यह है कि योग साधन करते समय मनुष्य अपने शरीर अर्थात् अन्नमय कोश को स्वस्थ और वलिष्ट रख सके, जिससे कोई रोग वा आलस्य आदि बाधा न होवे। इसीलिए आसनों का अन्नमय कोश से विशेष सम्बध है।

३ योग के अन्यअङ्ग और अन्य कोश ।

योग का चौथा अङ्ग प्राणायाम है, उसका प्राणमयकोश से विशेष संबंध है; क्योंकि प्राणायाम से प्राणों की शुद्धि और प्राणमय-कोश की वृद्धि वा विकास होता है। प्रत्याहार और धारणा का सम्बन्ध मनोमय कोश से है। प्रत्याहार से इन्द्रियों का निग्रह होता है, जैसा योगदर्शन में लिखा है—

"ततः परमावश्यतेन्द्रियाणाम्" (योग २ । ५५) अर्थात् प्रत्याहार से इन्द्रियां पूर्णतया वशीभूत हो जाती है। इन्द्रियनिग्रह से मनोमय कोश की वृद्धि होती है। धारणा चित्त की स्थिरता को कहते हैं, जैसा योगसूत्र में कहा है—"देशबन्धश्चित्तस्य. धारणा" (योग ३ । १)। इसलिए धारणा से भी मनोमय-कोश का विकास होता है। ध्यान का विशेष सम्बन्ध विज्ञानमय कोश से है, क्योंकि ध्यान से बुद्धि शुद्ध होती

और उन्नत होती है। समाधि का विशेष सम्बंध आनन्दमय कोश से है, क्यों कि समाधि से उक्त कोश की वृद्धि और ब्रह्मानन्द की प्राप्ति होती है, जैसा कहा गया है—

समाधि निर्धूत मलस्य चेतसो
निवेशि तस्यात्मनियत् सुखं भवेत्।
नशक्यते वर्णयितुं तदा गिरा
स्वयं तदन्तः करणेन गृह्यते ॥

अर्थ— जिस मनुष्य के चित्त का मल समाधि से धुलकर शुद्ध होगया है, उसके आत्मा को समाधि में जो आनन्द प्राप्त होता है, उसको वाणी से वर्णन नहीं किया जा सकता। वह केवल अन्तःकरण से ही जाना जाता है।

४ पंचकोश और योग की वृत्तियां।

योग की पंच वृत्तियों का भी जिनका वर्णन योग सूत्र पाद १ सूत्र ६-१० में है पंचकोशों से सम्बध कुछ योगी इस प्रकार बतलाते हैं—

प्रमाण का अन्नमय कोश से सम्बध
विपर्यय का प्राणमय कोश से
विकल्प का मनोमय कोश से
स्मृति का विज्ञान मय कोश से, और
निद्रा का आनन्दमय कोश से।

अंश ८

कोशों के ज्ञान की आवश्यकता

१ मोक्ष के चार साधन

सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में ऋषि दयानन्द ने अन्य उपायों के अतिरिक्त मोक्ष के निम्न लिखित चार विशेष साधन* बतलाये हैं—

(१) "विवेक अर्थात् सत्यासत्य धर्माधर्म कर्तव्याकर्तव्य का निश्चय,

(२) वैराग्य वा त्याग

(३) षटक् सम्पत्ति अर्थात् छः प्रकार के काम करना—

१-शम-जिससे अपने आत्मा और अन्तःकरण को अधर्माचरण से हटा कर धर्माचरण में सदा प्रवृत्त रखना।

२-दम-जिससे श्रोत्रादि इन्द्रियों और शरीर को व्यभिचारादि बुरे कर्मों से हटा कर जितेन्द्रियत्वादि शुभ कर्मों में प्रवृत्त रखना।

---

* जे० कृष्ण मूर्ति की प्रसिद्ध पुस्तक At the feet of my master जिसका जनता में अच्छा आदर हुआ वास्तव में ऊपर लिखे साधन चतुष्टय की ही व्याख्या रूप है।

३-उपरति-जिससे दुष्ट कर्म करने वाले पुरुषों से सदा दूर रहना।

४-तितिक्षा-चाहे निन्दा, स्तुति, हानि, लाभ कितना हो क्यों न हो परन्तु हर्ष शोक को छोड़ मुक्ति साधनों में सदा लगे रहना।

५-श्रद्धा-जो वेदादि शास्त्र और इनके बोध से पूर्ण आप्त विद्वान सत्योपदेश महाशयों के वचनों पर विश्वास करना।

६-समाधान-चित्त की एकाग्रता। ये छः मिलकर एक साधन तीसरा कहाता है।

(४) चौथा मुमुक्षुत्व-अर्थात् जैसे क्षुधा तृषातुर को सिवाय अन्न जल के दूसरा कुछ भी अच्छा नहीं लगता, वैसे विना मुक्ति के साधन और मुक्ति के दूसरे में प्रीति न होना।"

(स० प्र० समु० ९)

विवेक को पहिला स्थान दिया गया है क्योंकि सत्यासत्य के ज्ञान से ही सच्चा वैराग्य होता है और इन दोनों के होने पर शम, दम आदि गुणों का विकास होता है। और इन तीनों के होने से मोक्ष की दृढ़ इच्छा और योग्यता होती है।

२ विवेक और पंच कोशों का ज्ञान

इस पुस्तक के विषय का सम्बन्ध पहले साधन अर्थात् विवेक से है। ऋषि दयानन्द ने विवेक ही की व्याख्या करते हुए पंचकोश, तीन अवस्था और तीन शरीरों का वर्णन किया है जो अंश २ पैरा० ४ में दिया गया है।

योग दर्शन २।५ में पांच क्लेश बतलाये गये हैं। उनमें से एक अविद्या है जिसका लक्षण इस प्रकार किया गया है—

"अनित्या शुचि दुखाऽनात्मसु नित्य शुचि सुखात्म ख्यातिर-विद्या ॥५॥" (योग २।५)

(अर्थात्) अनित्य में नित्यता, अशुद्ध में शुद्धता दुख में सुख और अन्तरात्मा में आत्मा समझना इन चार प्रकार के विपरीत ज्ञान का नाम अविद्या है।

कोश और शरीर आत्मा से भिन्न हैं। इनको आत्मा समझना अविद्या है, साधारण लोग स्थूल शरीर अर्थात् अन्नमय कोश को ही आत्मा मानते हैं। यदि शरीर में कोई रोग हुआ तो कहते हैं "मैं रोगी हूं।"—अनात्मवादी वा देहात्मवादियों Materialists का तो मत यही है कि शरीर ही आत्मा है। जो लोग शरीर को आत्मा से भिन्न मानते हैं उनमें से बहुत से प्राण Life को ही आत्मा समझ लेते हैं। परन्तु जैसा ऊपर दिखलाया गया प्राणमय कोश भी स्थूल शरार के समान आत्मा का एक ढकना वा वस्त्र है। उसका काम स्थूल शरीर को जीवित रखना है। प्राण को आत्मा से भिन्न मानकर बहुत से लोग मन Mind को आत्मा समझ लेते हैं। अंग्रेजी फिलोसफी पढ़ने वालों के विचार बहुधा ऐसे होते हैं, क्योंकि उक्त फिलोसफी में साधारण तया दो पदार्थ Matter प्रकृति और Mind मन बतलाए गये हैं। परन्तु मन भी आत्मा से भिन्न और प्रकृति का एक विकार है। उसका काम इन्द्रियों को अपने कार्य में लगाना और संकल्प

विकल्प करना है, मन से ऊपर बुद्धि वा विज्ञान Intelligence और उससे ऊपर महत् और अहंकार Consiousness है, परन्तु आत्मा इन सबसे भिन्न है। ये सब अनात्मा अर्थात् प्रकृतिके रूप हैं। ये हथियार हैं जो आत्मा को भिन्न २ कार्य करने के लिए दिये गये हैं। इनमें से किसी को भी आत्मा समझना अविद्या है। इनका विवेचन करना आवश्यक है। विवेक की व्याख्या करते हुए ऋषि दयानन्द ने लिखा है—"जीव पंचकोशों का विवेचन करे"।

३ ब्रह्मज्ञान की उत्तरोत्तर प्राप्ति

यह भी कहा जा सकता है कि पाँच कोश भिन्न भिन्न तत्वों के बने हुए पाँच वस्त्र हैं जो जीवात्मा को इसलिए दिए गये हैं कि वह उनके द्वारा भिन्न भिन्न लोकों का अनुभव करके परमात्मा के ऐश्वर्य को जो सब लोकों में फैला हुआ है जाने। अन्नमय कोश सबसे ऊपर का अथवा वाहरी वस्त्र है, शेष चार कोश उसके भीतर हैं। और उन सबके भीतर आत्मा है अर्थात् जीवात्मा इन पांचों वस्त्रों को धारण किए हुए है। हम स्थूल शरीर की शुद्धि स्नान आदि द्वारा करते हैं और उसको स्वस्थ आर वलिष्ट बनाने के लिये अनेक प्रकार के यत्न करते हैं, परन्तु शेष चार कोशों की शुद्धि और उन्नति के उपायों की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं, जो योगाभ्यास जप और तप से हो सकती है। उनकी शुद्धि स्थूल शरीर की शुद्धि से भी अधिक आवश्यक है क्योंकि उन्हीं के द्वारा हम ब्रह्मज्ञान और आत्मिक उन्नति में उत्तरोत्तर वृद्धि कर सकते हैं, जैसा कि अं० ५ पैरा ४ में पहले कहा जा चुका है।

४ भृगु की कथा

यह बात तैत्तिरीयोपनिषद् की तीसरी वल्ली में जिसका नाम भृगु वल्ली है बड़ी सुन्दरता से दिखलाई गई है। उसमें लिखा है कि वरुण के पुत्र भृगु ने पिता के पास जाकर कहा—"अधीहि भगवो ब्रह्मेति" अर्थात् हे भगवन मुझको ब्रह्म का उपदेश दीजिए। वरुण ने कहा "यतो वा इमानि भूतानि जायंते, येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्य भि सं विशंति, तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्मेति," अर्थात् जिससे सब भूत उत्पन्न होते हैं, जिससे उत्पन्न होकर जीते हैं और अन्त में जिसमें प्रवेश करते हैं उसके जानने की इच्छा कर, वही ब्रह्म है।

भृगु ने तप किया, उसने तप से अन्नमय अर्थात् स्थूल जगत में जो ब्रह्म की विभूति है उसको जाना, और पिता के पास जाकर फिर कहा "अधीहि भगवो ब्रह्मेति" अर्थात् हे भगवन मुझको ब्रह्म का उपदेश दीजिए। पिता ने उत्तर दिया "तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व तपो ब्रह्मेति" अर्थात् तप से ब्रह्म को जानने का यत्न करो, क्योंकि तप द्वारा ही ब्रह्म जाना जाता है। भृगु ने फिर तप किया और तप करके प्राणमय जगत में जो ब्रह्म की विभूति है उसको जाना। उसने पिता के पास जाकर फिर ब्रह्मज्ञान प्राथना की। वरुण ने फिर वही उत्तर दिया "तपसा ब्रह्म विजिज्ञा सस्व" अर्थात् तप से ब्रह्म को जानने का यत्न करो। भृगु ने फिर तप किया और मनोमय लोक में जो ब्रह्म की विभूति है उसको जाना। वह चौथी वार वरुण के पास गया और कहा कि भगवन् मुझको

ब्रह्म का उपदेश दीजिये। वरुण ने वही उत्तर दिया कि तप करो। भृगु ने वैसा ही किया और विज्ञानमय लोक में जो ब्रह्म की विभूति है उसको जाना। वह फिर पिता के पास गया। वरुण जानते थे कि भृगु को अभी एक सीढ़ी चढ़नी और शेष है, इस लिए उसने पुत्र को फिर भी तप करने का आदेश दिया। भृगु ने उसका यथावत पालन किया और अन्त में आनन्द स्वरूप ब्रह्म को जाना, जैसा नीचे लिखे मन्त्र में कहा गया है—

"आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्—आनन्दाद् ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, आनन्देन जातानि जीवन्ति आनन्दं प्रयन्त्य भि सविशन्तीति। सैषा भार्गवी वारुणी विद्या परमे व्योमन् प्रतिष्ठिता ॥ ५ ॥ (तैति० ३।५)

(अर्थ) उसने जाना कि आनन्द ब्रह्म है आनन्द ही से निश्चय सब भूत उत्पन्न होते हैं, आनन्द ही से उत्पन्न होकर जीवित रहते हैं, आनन्द ही में अन्त में प्रवेश करते हैं।

५ आनन्द

इस कथा से यह उपदेश मिलता है कि जीवात्मा किस प्रकार योगाभ्यास और तप के द्वारा एक कोश वा लोक से दूसरे लोक में उन्नत होकर ब्रह्म ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करता है और अन्त को उस ब्रह्मानन्द को प्राप्त करता है, जिसका वर्णन इसी उपनिषद् की ब्रह्म वल्ली के आठवें अनुवाक की आनन्द मीमांसा में किया गया है। उस में कहा गया है कि यदि कोई मनुष्य "युवा हो, श्रेष्ठ हो, सुशिक्षित हो, पुरुषार्थी हो, अति दृढ़ और बलिष्ठ

हो, उसके लिए यह सारी पृथ्वी धन सम्पत्ति से पूर्ण होजावे तो वह एक मानुष अर्थात् मनुष्य सम्बन्धी आनन्द है ।" उससे करोड़ों वा अरबों गुने आनन्द को ब्रह्मानन्द कहा गया है।

इस अनुवाक के अन्त में बतलाया गया है कि जीवात्मा ब्रह्मज्ञानी होकर किस प्रकार कोशों को पार करके ब्रह्म को प्राप्त होता है।

"सय एवंवित् अस्माँल्लोकात्प्रेत्य, एतमन्नमयमात्मान मुप संक्रामति, एतं प्राण मय मात्मान मुप संक्रामति, एतं मनोमय मात्मान मुप संक्रामति, एतं विज्ञान मय मात्मान मुप संक्रामति, एतमानन्द मयमात्मान मुप संक्रामति ।"

(अर्थ) जो मनुष्य इस प्रकार ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त कर लेता है वह इस लोक से मृत्यु के समय इस अन्नमय कोश को पार करता है, इस प्राणमय कोश को पार करता है, इस मनोमय कोश को पार करता है, इस विज्ञानमय कोश को पार करता है, इस आनन्दमय कोश को पार करता है।

---

* ब्रह्मानन्द का ऐसा ही वर्णन वृहदारण्यक उपनिषद् ४।३।३३ में और शतपथ ब्राह्मण १४।७।१।३१ में पाया जाता है।

अंश ९

कठोपनिषद् में मनुष्य की जीवन यात्रा का अलंकार

६ कठोपनिषद् में मनुष्य जीवन का अलंकार

हम अन्त में उस सुन्दर और शिक्षा पूर्ण अलङ्कार को लिखते हैं जिसके द्वारा कठोपनिषद् में मनुष्य की आत्मिक उन्नति का मार्ग बतलाया गया है। उसके अनुसार मनुष्य एक यात्री है जिसको ईश्वर के पास पहुँचना है। यह संसार एक बन के समान है जिसमें होकर उस यात्री का मार्ग है। मनुष्य का शरीर एक रथ है जो इस यात्री को अपनी यात्रा पूरी करने के लिए दिया गया है। अलङ्कार इस प्रकार है—

"आत्मानं रथिनं विद्धि, शरीरं रथ मेवतु ॥ २ ॥
बुद्धिन्तु सारथिं विद्धि, मनः प्रग्रह मेवच ॥ ३ ॥
इन्द्रियाणि हयानाहु र्विषयांस्तेषु गोचरान् ।
आत्मेन्द्रिय मनो युक्तं, भोक्ते त्याहुर्मनीषिणः ॥ ४ ॥
यस्त्व विज्ञानवान् भवत्य युक्तेन मनसा सदा ।
तस्येन्द्रियाण्य वश्यानि दुष्टाश्वा इव सारथेः ॥ ५ ॥
यस्तु विज्ञान वान् भवति युक्तेन मनसा सदा ।
तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथेः ॥ ६ ॥
यस्त्व विज्ञान वान् भवत्य मनस्कः सदाऽशुचि ।
नस तत्पदमाप्नोति संसारञ्चाधि गच्छति ॥ ७ ॥

यस्तु विज्ञान वान् भवति समनस्कः सदा शुचि ।
सतुतत्पद माप्नोती यस्माद्भूयो न जायते ॥८॥
विज्ञान सारथिर्यस्तु मनः प्रग्रहवान्नरः ।
सोऽध्वनः पार माप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ ६ ॥
(कठ ३।३।९)

(अर्थ) आत्मा को रथ का स्वामी जानो और शरीर को रथ, बुद्धि को सारथी जानो, और मन को लगाम ॥ ३ ॥ इन्द्रियाँ घोड़े हैं और इन्द्रियों के विषय उनके जाने के मार्ग हैं। विद्वानों ने इन्द्रिय और मन सहित आत्मा को भोक्ता कहा है ॥ ४ ॥ जो मनुष्य बुद्धिमान नहीं और जिसका मन योग से युक्त अर्थात् स्थिर नहीं उसकी इन्द्रियाँ वश में नहीं होती जैसे दुष्ट घोड़े सारथी के वश में नहीं होते ॥ ५ ॥ जो मनुष्य बुद्धिमान् होता है और जिसका मन योग से स्थिर है उसकी इन्द्रियाँ वश में होती हैं जैसे उत्तम घोड़े सारथी के वश में होते हैं ॥ ६ ॥ जो मनुष्य बुद्धिमान् नहीं और जिसका मन वश में नहीं और सदा अपवित्र रहता है वह उस परम धाम को नहीं पा सकता किन्तु संसार में ही रहता है, (अर्थात् जन्म मरण के चक्र में घूमता है) ॥ ७ ॥ जो मनुष्य बुद्धिमान हैं जिसका मन वश में है और जो सदा पवित्र रहता है वह उस परमपद को प्राप्त करता है जहाँ से फिर जन्म नहीं लेता ॥ ८ ॥ जिस मनुष्य का बुद्धि सारथी है और मन लगाम उसके वश में है वह इस मार्ग को पार करके उस परमात्मा के परमपद (अर्थात् मोक्ष) को पा लेता है ॥ ६ ॥

८ कठोपनिषद् में मनुष्य के तत्वों का वर्णन

इसके आगे उपनिषद् में मनुष्य के मुख्यतत्वों का क्रम से वर्णन किया गया है जो लगभग उसी प्रकार है जैसा तैत्तिरीयोपनिषद् में कोशों का और सांख्य में तत्वों का वर्णन है—

"इंद्रियेभ्यः पराह्यर्था अर्थेभ्यश्च परंमनः।
मनसस्तु परा बुद्धि बुद्धेरात्मा महान् परः॥ १०॥
महतः परम व्यक्त मव्यक्तात् पुरुषः परः।
पुरुषान्न परं किञ्चित्साकाष्टा सा परा गतिः॥ ११॥

(अर्थ) इन्द्रियों से परे तन्मात्रा वा इन्द्रियों के विषय हैं उनके ऊपर मन है, मन के ऊपर बुद्धि है, बुद्धि से ऊपर महत् है ॥ १०॥ महत् से ऊपर अव्यक्त (अर्थात् मूल प्रकृति) है, अव्यक्त के ऊपर * पुरुष है, पुरुष के ऊपर कुछ भी नहीं, वह परम सीमा और परमगति है ॥ ११॥ (यह क्रम ऐसा ही है जैसा रथ के विषय में यह कहना कि घोड़ों के ऊपर लगाम है लगाम सारथी के अधीन है। सारथी रथ के स्वामी के अधीन और वह उसके अधीन है जिसको मिलने के लिए वह यात्रा कर रहा है)।

९ उपसंहार

अन्त में उपनिषत् कारने ईश्वर का स्वरूप और संक्षेप से उसकी प्राप्ति का उपाय बतलाते हुए उसकी खोज करने वालों को प्रौढ़ शब्दों में चेतावनी दी है—

* पुरुष शब्द के अन्तर्गत जीवात्मा और परमात्मा दोनो हैं।

,,एष सर्वेषु भूतेषु गूढोत्मान प्रकाशते ।
दृश्यते त्व ग्रया वुध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभि ॥ १२ ॥
यच्छे द्वाङ्म नसि प्राज्ञ स्तद्यच्छे ज्ञान आत्मनि ।
ज्ञान मात्मनि महति नियच्छेत दृद्यच्छेच्छान्त आत्मनि ॥ १३॥
उतिष्ठत, जागृत, प्राप्य वराम्निवोधत चुरस्य धारा
निशिता दुरत्यया दुर्गम्पथ स्ततूकवयो वदन्ति ॥ १४ ॥
अशब्द मस्पर्श मरूप मव्ययं तथाऽरसन्नित्यमगंधवच्चयत् ।
अनाद्यनन्त म्महतः परंध्रुवं निचाय्य तन्मृत्यु मुखात्प्रमुच्यते
॥ १५ ॥

(अर्थ) यह परमात्मा सब भूतों में छिपा हुआ है प्रकट नहीं होता परन्तु सूक्ष्म दर्शियों से तीव्र और सूक्ष्म बुद्धि द्वारा देखा जाता है ॥ १२ ॥ वुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि वाणी आदि इन्द्रियों को मन के वश में करे, मन को वुद्धि के ,वश में करे, वुद्धि को महान आत्मा के अधीन करे और आत्मा को परमात्मा के अधीन करे ॥ १३ ॥ उठो जागो ! श्रेष्ट जनों को पाकर उनके सत्संग से ज्ञान प्राप्त करो । धर्म का मार्ग छुरे की धार के समान तीव्र और कठिन है, इस लिए उसको ज्ञानी लोग दुर्गम बतलाते हैं ॥ १४ ॥ परमात्मा शब्द नहीं, स्पर्श नहीं, रूप नहीं रस नहीं गन्ध नहीं (अर्थात् वह इन्द्रियों से नहीं जाना जा सकता) । वह विकार रहित अनादि अनन्त, सूक्ष्म प्रकृति से भी परे, और निश्चल है, उसी को जान कर मनुष्य मृत्यु के मुख से छूटता है (अर्थात् मोक्ष पा सकता है) ।

१२ वें श्लोक में सारे अलङ्कार का सार निकाल कर रख दिया गया है। रथ में बैठा हुआ यात्री अपनी यात्रा पूरी कर सके इसके लिए इन बातों की आवश्यकता है—कि घोड़े लगाम के वश में हों, लगाम सारथि के हाथ में हो, सारथि रथ के स्वामी का आज्ञानुवर्ती हो, और रथ के स्वामी को यात्रा पूर्ण करने और निर्दिष्ट स्थान पर पहुंचने की सची चाह हो। इसी प्रकार जीवात्मा परमपद अर्थात् परमात्मा को प्राप्त कर सके इसके लिए इन बातों की आवश्यकता है—कि इन्द्रियाँ मन के वश में हों, मन बुद्धि के अधीन हो, बुद्धि आत्मा के अधीन हो और आत्मा को परमात्मा से सची लगन हो। यह मार्ग कितना दुस्तर है इसको इसी बात से समझा जा सकता है कि पहली बात अर्थात् इन्द्रियों को मन के वश में करना कैसा कठिन है। इसीलिए उपनिषत् कार ने मार्ग को छुरे की धार के समान तीव्र बतलाया है। हम को संसार में साधारण कार्यों की सफलता के लिये भारी परिश्रम करने पड़ते हैं। मोक्ष या परमपद जैसे महान् उद्देश्य की सफलता का मार्ग सरल कैसे हो सकता है? उसके लिये श्रेष्ठ ज्ञानी लोगों का सत्संग और योगाभ्यास जप तप आदि की आवश्यकता है जैसा उपनिषदों में बतलाया है। परमात्मा हम को ऐसा आशीर्वाद देवे कि हम उपनिषत् कार की ऊपर लिखी चेतावनी को सुनें और जागें और मार्ग को पूरा करने के लिए यत्न वान् हों।

॥ ओ३म् शम् ॥